पूर्वांचल खेती

स्थापना दिवस विशेषांक

वर्ष : 32 अक्टूबर 2022 अंक : 10

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

स्थापना दिवस विशेषांक

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

स्थापना दिवस विशेषांक

वर्ष 32 | अक्टूबर 2022 | अंक 10

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

प्रो. ए. पी. राव

निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

मो. नं. 9450938866

सम्पादक मण्डल

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

वैज्ञानिक तकनीक से गेहूँ की भरपूर पैदावार 01
सौरभ वर्मा एवं ए.पी. राव

सरसों की बीज उत्पादन तकनीक 07
सर्वजीत एवं एस के मिश्रा

चने की उन्नत खेती 09
संजीत कुमार

प्राकृतिक खेतीः सिद्धांत एवं रणनीतियां 11
विनीत धीर एवं संजीव कुमार

धान के पुआल (पराली) का मशीनों द्वारा प्रबन्धन 14
शैलेश कुमार सिंह एवं अश्विनी कुमार सिंह

उ0 प्र0 में शून्य पुवाल/पराली बर्निंग हेतु प्रसार की रणनीतियां 16
आर0के0 सिंह एवं ए0 पी0 राव

देसी गौवंश आधारित प्राकृतिक खेती 19
प्रकाश सिंह एवं नरेन्द्र रघुबंशी

गेहूँ–धान फसल चक फसल अवशेष प्रबंधन 21
के.एम.सिंह एवं आर.आर. सिंह

ओट्स के फायदे जो बना सकते हैं आपको स्वस्थ और सेहतमंद 23
कंचन एवं एस.के. तोमर

असन्तुलित पोषण सें पशुओं में होनें वाले प्रमुख रोग – बचाव एवं उपचार 26
विद्या सागर एवं राम जीत

सुपर सीडर द्वारा गेहूं की बुवाई से लागत में बचत एवं फसल अवशेषो का उचित प्रबंधन 29
एस .के. तोमर एवं मनोज कुमार

अक्टूबर माह में किसान भाई क्या करें 32

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 32

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/प्रभारी अधिकारी	दूरभाष कार्यालय	मोबाइल
1.	वाराणसी	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	05542–248019	9415687643
2.	बस्ती	डॉ. एस. एन. सिंह	05498–258201	9450547719
3	बलिया	श्रीमती प्रेमलता श्रीवास्तव	–	9918175154
4.	फैजाबाद	डॉ. शशिकान्त यादव	05278–254522	9415188020
5.	मऊ	डॉ. एल. सी. वर्मा	0547–2536240	7376163318
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	0541–2260595	9458362153
7.	बहराइच	डॉ. विनायक शाही	05252–236650	8755011086
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	–	9415155518
9.	आज़मगढ़	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	–	9455501727
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	–	7839325836
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	–	9984369526
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. ओम प्रकाश	05541–241047	9452489954
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	–	9415450175
15.	बलरामपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	–	9450885913
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	–	9918622745
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	–	9415039117
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	–	9838952621
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. के. एम. सिंह	–	9307015439
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. मिथिलेश पाण्डे	–	9415665138
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. वी.पी. सिंह	–	9839420165
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. संजीत कुमार	–	9837839411
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	–	9411320383
24.	श्रावस्ती	डॉ. आर.पी.एस. रघुवंशी	–	9415533739
25.	आजमगढ़ द्वितीय	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. ए. पी. राव.	9415720376	–
2.	गोण्डा	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
3.	देवरिया	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
4.	गाजीपुर	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. नितेन्द्र प्रकाश	9026289336	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. एस. के. सिंह	8787289358	0548–223690

फसल अवशेष प्रबन्धन क्षेत्र में विश्वविद्यालय द्वारा किये जा रहे हैं सराहनीय कार्य

उत्तर प्रदेश के पूर्वान्चल क्षेत्र में जनपद महाराजगंज, सिद्धार्थनगर, आजमगढ़, जौनपुर, वाराणसी, चन्दौली, बहराइच एवं बाराबंकी जिलों में कृषि विज्ञान केन्द्रों के माध्यम से पराली प्रबन्धन पर वर्ष 2018 से सराहनीय कार्य किये जा रहे है। कृषकों में जागरूकता हेतु जनपद स्तरीय, विकासखण्ड स्तरीय एवं ग्राम स्तरीय प्रशिक्षण एवं गोष्ठियों के आयोजन किये जा रहे है। जागरूकता कार्यक्रय स्तर पर पराली को जलाने से रोकने हेतु तथा इनका प्रबन्धन प्रक्षेत्र स्तर पर अथवा अन्य कार्यों में जैसे मशरूम उत्पादन में, पशुचारा में तथा कम्पोस्टिंग आदि में प्रयोग हेतु प्रेरित किया जा रहा है।

साथ ही भारत सरकार से फसल अवशेष प्रबन्धन योजनान्तर्गत पराली प्रबन्धन मशीने जैसे सुपर सीडर, हैपी सीडर, मल्चर, रिवर्सवल मिट्टी पलट हल, रोटावेटर, रीपर एवं बाइण्डर आदि मशीनों का कृषक प्रक्षेत्रों पर प्रदर्शन अयोजित किये जा रहे हैं। इस कड़ी में चयनित जनपदों के कृषि विज्ञान केन्द्रों पर यह उपकरण उपलब्ध प्रदर्शन हेतु है जो कि कृषकों के प्रक्षेत्रों पर पराली प्रबन्धन हेतु प्रयोग किये जा रहे है। साथ ही उक्त मशीनें कृषकों को विश्वविद्यालय द्वारा चयनित दर पर किराये पर भी उपलब्ध करायी जा रही है। पराली प्रबन्धन के हेतु कृषि विज्ञान केन्द्रों की तरफ से लगातार प्रयास किये जा रहे है। केन्द्रों द्वारा ऐसे गावों को गोद लिया जा रहा है जहाँ पराली जलाने के मामले सामने आते रहे हैं। यह केन्द्र प्रत्येक वर्ष 5 से 7 गावों को गोद लेता है और उन्हें पराली प्रबन्धन के गुट सिखाता है। इसी का परिणाम है कि अब पराली जलाने के मामलों में काफी कमी आयी है। गत वर्ष से पूसा डिकम्पोजर एवं एन.बी.ए.आई.एम. तेजस व डिकम्पोजर का पराली प्रबन्धन में प्रयोग किया जा रहा है जो कि शीघ्रता से पराली की कम्पोस्ट बनाने में सहायक सिद्ध हो रहा है इन जनपदों में विश्वविद्यालय स्तर से किये गये कार्यों का विशेष परिणाम पराली प्रबन्धन एवं प्रक्षेत्रों में जीवांश कार्बन की मात्रा में वृद्धि पायी जा रही है।

प्राकृतिक खेती पर विश्वविद्यालय स्तर पर किये जा रहे हैं सराहनीय कार्य

विश्वविद्यालय स्तर पर भारत एवं प्रदेश सरकार की मंशा के अनुसार प्राकृतिक खेती पर शोध एवं प्रसार कार्य किये जा रहे है। विश्वविद्यालय के शस्य विज्ञान शोध प्रक्षेत्र पर नवनिर्मित खण्ड में 10 एकड़ प्रक्षेत्र पर कुल एक–एक एकड़ के 10 उप–खण्ड बनाये गये है, जिन पर वर्ष 2021 से ही फसलों में शोध कार्य किया जा रहा है।

विश्वविद्यालय के प्रसार निदेशालय के प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन प्रक्षेत्र पर प्राकृतिक खेती पर नवीनतम प्रजातियों का सस्यालय स्थापित किया गया है एवं मूल्यांकन उपरान्त अधिक उपज देने वाली प्रजातियों को पूर्वी उत्तर प्रदेश हेतु प्राकृतिक खेती हेतु संस्तुत किया जायेगा। विश्वविद्यालय के प्रत्येक कृषि विज्ञान केन्द्रों को 01 एकड़ प्रक्षेत्र पर प्राकृतिक खेती हेतु आंवटित किया गया है उक्त के परिचालन में प्रत्येक कृषि विज्ञान केन्द्रों के बीज उत्पादन प्रक्षेत्र पर 01 एकड़ उप–खण्ड पर प्राकृतिक खेती अन्तर्गत फसलोंत्पादन कार्यक्रम कर कृषकों के केन्द्र भ्रमण दौरान प्रेरित किया जा रहा है। केन्द्रों पर गौ आधारित जीवामृत, धनजीवामृत, बीजामृत एवं नीमास्त्र आदि का निर्माण कर केन्द्र प्रक्षेत्रों पर एवं कृषकों की उपलब्ध कराया जा रहा है। केन्द्रों द्वारा वर्ष 2021–22 में कुल 74.0 हेक्टेयर प्रक्षेत्र पर प्राकृतिक खेती के प्रदर्शन आयोजित किये गये है एवं वर्ष 2022–23 में कुल 165. 0 हेक्टेयर में प्रदर्शन प्रस्तावित है। प्रदेश सरकार स्तर पर भी समस्त कृषि विज्ञान केन्द्रों के वैज्ञानिकों को मास्टर ट्रेनर के रूप में प्रशिक्षित किया गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा भी विश्वविद्यालय के 13 कृषि विज्ञान केन्द्रों के प्राकृतिक खेती परियोजना हेतु चयनित किया गया है जिसमें प्रत्येक केन्द्रों की रू0 4.32 लाख आवंटित किया गया है। जिसके माध्यम से जनपद के कृषकों की प्रशिक्षण, प्रदर्शन एवं जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से प्रचार–प्रसार की गति दिया जा रहा है।

डॉ. बिजेन्द्र सिंह
कुलपति
Dr. Bijendra Singh
Vice-Chancellor

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229 (उ.प्र.), भारत
Acharya Narendra Deva University of Agriculture & Technology
Kumarganj, Ayodhya - 224 229 (U.P.) India

संदेश

विश्वविद्यालय द्वारा दिनांक 10 अक्टूबर, 2022 को 48वें स्थापना दिवस समारोह का आयोजन किया जा रहा है। पूर्वान्चल के किसानों का तीर्थ माने जाने वाले विश्वविद्यालय के मुख्य परिसर में इस अवसर पर यह प्रयास है कि कृषि व कृषि उद्यम से जुड़ी महत्वपूर्ण जानकारियॉं, आधुनिक कृषि निवेश तथा नवीनतम तकनीकों के प्रदर्शन से कृषक भाईयों का ज्ञानवर्धन किया जा सके। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि के रूप में पूर्वी उत्तर प्रदेश के सौभाग्य से उपस्थित देश के कृषि एवं कृषक कल्याण मंत्री माननीय नरेन्द्र सिह तोमर जी का मार्गदर्शन व आशीर्वाद कृषक भाईयों, कृषि वैज्ञानिकों, प्रसार कार्यकर्ताओं को प्राप्त होगा जो निश्चित रूप से उत्तर प्रदेश की कृषि को नई दिशा प्रदान करेगा।

इस महत्वपूर्ण अवसर पर विश्वविद्यालय के प्रसार निदेशालय द्वारा नियमित रूप से प्रकाशित पत्रिका पूर्वांचल खेती का स्थापना दिवस विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है जो हमारे कृषक परिवारों को तकनीकी रूप से अपने कृषि ज्ञान को अद्यतन करने में सहायक होगी। स्थापना दिवस के आयोजन व पत्रिका के स्थापना दिवस विशेषांक के प्रकाशन पर विश्वविद्यालय परिवार व प्रसार निदेशालय के साथ–साथ विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों, कर्मियों व विद्यार्थियों को अपनी शुभकामनायें देता हूँ तथा कार्यक्रम के सफल आयोजन के लिये मंगल कामनायें करता हूँ।

(बिजेन्द्र सिंह)
कुलपति

Ph.: *(05270) 262161 (O)* **Telefax :** *262097 (O)* **Ph.:** *262842 (R)* **Telefax :** *262032 (R)* **Email :** *vcnduat2018@gmail.com*

प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

कृषि के प्रति ग्रामीण युवाओं में आकर्षण बनाये रखने में सबसे बड़ी चुनौती लाभप्रद खेती है। जब तक हमारे ग्रामीण परिवारों की सहज जीवनचर्या के लिये पर्याप्त आय कृषि से नहीं हासिल होगी इस क्षेत्र को स्थिर रोजगार का साधन बनाये रखने में कठिनाईयां आती रहेंगी। इन्ही कठिनाईयों को दृष्टिगत रखते हुये भारत सरकार कृषि क्षेत्र में शोध, शिक्षा व प्रसार से जुड़े संस्थानों व विभागों के माध्यम से कृषक आय में दोगुनी वृद्धि के लिये कुछ वर्षों से गंभीरता से विचार कर कार्य योजनाओं को अमल में लाने में जुटी हुयी है।

पूर्वांचल के कृषकों के बीच लोकप्रिय कृषि मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती के प्रकाशन में भी लगातार यह प्रयास किये जा रहे हैं कि हमारे किसान भाईयों तक दलहन, तिलहन, औद्यानिक, सब्जी, खाद्यान्न फसलों की उन्नत उत्पादन तकनीकों के साथ–साथ पशुपालन, मत्स्य पालन जैसे कृषि आधारित उद्यमों की अत्याधुनिक वैज्ञानिक जानकारी, लेखों के माध्यम से पहुंचाई जाये। इस माह विश्वविद्यालय के 48वें स्थापना दिवस समारोह का आयोजन भी किया जा रहा है। इस महत्वपूर्ण अवसर पर मैं कृषि विश्वविद्यालय परिवार व विद्यार्थियों को अपनी शुभकामनाऐं देता हूं।

आशा है कि पत्रिका का यह अंक रबी फसलों के बेहतर उत्पादन के साथ–साथ विभिन्न फसलों के सस्य प्रबन्धन में महत्वपूर्ण मार्गदर्शक का कार्य करेगा।

(ए.पी. राव)

वैज्ञानिक तकनीक से गेहूँ की भरपूर पैदावार

सौरभ वर्मा* एवं ए.पी. राव**

भारत में गेहूँ एक मुख्य फसल है। गेहूँ का लगभग 97 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित है। गेहूँ का प्रयोग मनुष्य अपने जीवन यापन हेतु मुख्यतः रोटी के रूप में करते हैं, जिसमे प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पायी जाती है। भारत में पंजाब, हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश मुख्य फसल उत्पादक क्षेत्र हैं। गेहूँ के दानों में लगभग 10–13 प्रतिशत प्रोटीन पायी जाती है। गेहूँ का भूसा हमारे देश में पशुओं के लिए एक महत्वपूर्ण चारा है।

हमारे प्रदेश में धान के बाद उत्पादन में दूसरा स्थान गेहूँ का ही है। अगर किसान भाई परम्परागत विधि की जगह गेहूँ की वैज्ञानिक विधि एवं सघन पद्धतियों को अपनायें तो उत्पादन को दो गुना तक बढ़ाया जा सकता है जिसकी अपार सम्भावनायें हैं।

प्रमुख प्रजातियाँ

गेहूँ की प्रजातियों का चुनाव भूमि एवं साधनों की दशा एवं स्थिति के अनुसार किया जाता है, मुख्यतः तीन प्रकार की प्रजातिया होती है सिंचित दशा वाली, असिंचित दशा वाली एवं उसरीली भूमि की प्रजातियाँ।

असिंचित दशा

इसमें मगहर (के 8027), इंद्रा (के 8962), गोमती (के 9465), के 9644, मन्दाकिनी (के 9251), एच.डी.आर. 77 एवं नरेन्द्र गेहूँ 4018 आदि हैं।

सिंचित दशा

सिंचित दशा वाली प्रजातियाँ में दो प्रकार की प्रजातियाँ पायी जाती हैं, एक तो समय से बुवाई के लिए देवा (के 9107), एच.पी. 1731 (राजलक्ष्मी), नरेन्द्र गेहूँ 1012, उजियार (के 9006), डी.एल. 784–3 (वैशाली), एच.यू.डब्ल्यू. 468, एच.यू.डब्ल्यू. 510, एच. डी. 2888, एच.डी. 2967, यूपी 2382, पी.बी.डब्ल्यू. 443, पी.बी.डब्ल्यू. 550, एच.डी. 2824, एच.डी. 3043, एच.डी. 1563, एच.डी. 2985, एच.डी. 3086, एच.डी. 3226, सी.बी.डब्ल्यू. 38, डी.बी.डब्ल्यू. 187 (करण वन्दना), डी.बी.डब्ल्यू. 222 (करण नरेन्द्र), डी.बी.डब्ल्यू. 252 (करण श्रिया), डी.बी.डब्ल्यू. 39 आदि हैं। देर से बुवाई के लिए त्रिवेणी (के 8020), सोनाली (एच.पी. 1633), गंगा (एच.डी. 2643), डी.बी. डब्ल्यू. 14, के 9533, एच.पी. 1744, नरेन्द्र गेहूँ 1014, नरेन्द्र गेहूँ 2036, नरेन्द्र गेहूँ 1076, यूपी 2425, के 9423, के 9903, एच.डब्ल्यू. 2045, पी.बी.डब्ल्यू. 373, डी.बी. डब्ल्यू. 16, डी.बी.डब्ल्यू. 173, डी.बी.डब्ल्यू. 107 आदि हैं।

उसरीली भूमि के लिए

लोक 1, प्रसाद (के 8434), के.आर.एल. 1–4, के.आर. एल. 19, के.आर.एल. 210, के.आर.एल. 213, के.आर. एल. 210, एन.डब्ल्यू. 1067 आदि हैं, उपर्युक्त प्रजातियाँ अपने खेत एवं दशा को समझकर चयन करना चाहिए।

जलवायु व भूमि का चयन

गेहूँ की खेती के लिए समशीतोष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है, इसकी खेती के लिए अनुकूल तापमान बुवाई के समय 20–25 डिग्री सेंटीग्रेट माना जाता है। गेहूँ सभी प्रकार की कृषि योग्य भूमियों में पैदा हो सकता है परन्तु दोमट से भारी दोमट, जलोढ़ मृदाओ में गेहूँ की खेती सफलता पूर्वक की जाती है। जल निकास की सुविधा होने पर मटियार दोमट तथा काली मिट्टी में भी इसकी अच्छी फसल ली जा सकती है। कपास की काली मृदा में गेहूँ की खेती के लिए सिंचाई की आवश्यकता कम पड़ती है। भूमि का पी. एच. मान 5 से 7.5 के बीच में होना फसल के लिए उपयुक्त रहता है क्योंकि अधिक क्षारीय या अम्लीय भूमि गेहूं के लिए अनुपयुक्त होती है।

खेत की तैयारी

गेहूँ की बुवाई अधिकतर धान की फसल काट लेने के बाद की जाती है। अतः गेहूँ की बुवाई करने में बहुधा

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान) **निदेशक प्रसार, प्रसार निदेशालय आ.न.दे.कृ.प्रौ.वि.वि. कुमारगंज, अयोध्या

देर हो जाती है। गेहूँ की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए धान की समय से रोपाई करना आवश्यक है जिससे खेत अक्टूबर माह में खाली हो जायें। अच्छे अंकुरण के लिये बेहतर भुरभुरी मिट्टी की आवश्यकता होती है। समय पर जुताई खेत में नमी संरक्षण के लिए भी आवश्यक है। वास्तव में खेत की तैयारी करते समय हमारा लक्ष्य यह होना चाहिए कि बोआई के समय खेत खरपतवार मुक्त हो, भूमि में पर्याप्त नमी हो तथा मिट्टी इतनी भुरभुरी हो जाये ताकि बुवाई आसानी से उचित गहराई तथा समान दूरी पर की जा सके। खरीफ की फसल काटने के बाद खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल (एमबी प्लोऊ) से करनी चाहिए जिससे खरीफ फसल के अवशेष और खरपतवार मिट्टी मे दबकर सड़ जायें। इसके बाद आवश्यकतानुसार 2–3 जुताइयाँ देशी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा देकर खेत समतल कर लेना चाहिए। डिस्क हैरो/हैपी सीडर/सुपर सीडर का प्रयोग उस समय और अधिक आवश्यक हो जाता जब धान की कटाई कम्बाइन से की गई हो या खेत में ठूँठ बड़े दिखाई पड़ें, तो ये डिस्क हैरो उनके छोटे– छोटे टुकड़े कर देते है। इन्हें सड़ाने हेतु 15–20 किलोग्राम नत्रजन (यूरिया के रूप में) प्रति हे0 खेत तैयार करते समय पहली जुताई पर अवश्य दे देना चाहिये। खेत ट्रैक्टर चालित रोटावेटर द्वारा एक ही जुताई में पूर्ण रूप से बुवाई हेतु तैयार हो जाता है।

बुवाई का समय

गेहूँ की बुवाई समय से एवं पर्याप्त नमी पर करना चाहिये। देर से पकने वाली प्रजातियों की बुवाई समय से अवश्य कर देनी चाहिए अन्यथा उपज में कमी हो जाती है। जैसे–जैसे बुवाई में विलम्ब होता जाता है वैसे–वैसे पैदावार में गिरावट होती जाती है। शोधोपरान्त यह पाया गया है कि दिसम्बर में बुवाई करने पर पैदावार 3–4 कुन्तल/हे0 एवं जनवरी में करने से प्रति सप्ताह 4–5 कु0/हे0 की दर से घटोत्तरी होती है। सिंचित दशा में गेहूँ की बुवाई नवम्बर का दूसरा सप्ताह व तीसरे सप्ताह तक तथा देर से बुवाई दिसम्बर का प्रथम पखवाड़ा तक अवश्य कर देनी चाहिए। बुवाई में 30 नवम्बर से अधिक देरी नहीं होना चाहिए। यदि किसी कारण से बुवाई विलंब से करनी हो तब देर से बोने वाली किस्मो को दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक जाना चाहिये। देर से बोयी गई फसल को पकने से पहले ही सूखी और गर्म हवा का सामना करना पड़ जाता है जिससे दाने सिकुड़ जाते है तथा उपज कम हो जाती है।

प्रयोगों से यह देखा गया है कि लगभग 15 नवम्बर के आसपास गेहूँ बोये जाने पर अधिकतर बौनी किस्में अधिकतम उपज देती हैं। असिंचित अवस्था में बोने का उपयुक्त समय वर्षा ऋतु समाप्त होते ही मध्य अक्टूबर के लगभग है। अर्धसिंचित अवस्था मे जहाँ पानी सिर्फ 2–3 सिंचाई के लिये ही उपलब्ध हो, वहाँ बोने का उपयुक्त समय 25 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक है।

बीज की मात्रा

चुनी हुई किस्म के बड़े–बड़े साफ, स्वस्थ्य और विकार रहित दाने, जो किसी उत्तम फसल से प्राप्त कर सुरंक्षित स्थान पर रखे गये हो, उत्तम बीज होते है। बीज दर भूमि मे नमी की मात्रा, बोने की विधि तथा किस्म पर निर्भर करती है। बौने गेहूँ की खेती के लिए बीज की मात्रा देशी गेहूँ से अधिक होती है। बौने गेहूँ के लिए 100–120 किग्रा प्रति हेक्टेयर तथा देशी गेहूँ के लिए 70–90 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई करनी चाहिये। असिंचित गेहूँ के लिए बीज की मात्रा 100 किलो प्रति हेक्टेयर व कतारों के बीच की दूरी 22–23 सेमी. होनी चाहिये। समय पर बोये जाने वाले सिंचित गेहूँ में बीज दर 100–125 किलो प्रति हेक्टेयर व कतारो की दूरी 20–22.5 सेमी. रखनी चाहिए। देर वाली सिंचित गेहूँ की बुवाई के लिए बीज दर 125–150 किग्रा प्रति हेक्टेयर तथा पंक्तियों के मध्य 15–18 सेमी. का अन्तरण रखना उचित रहता है। बीज को रात भर पानी में भिगोकर बोना लाभप्रद है। भारी चिकनी मिट्टी में नमी की मात्रा आवश्यकता से कम या अधिक रहने तथा बुवाई में बहुत देर हो जाने पर अधिक बीज बोना चाहिए। मिट्टी के कम उपजाऊ होने या फसल पर रोग या कीटों से आक्रमण की

सम्भावना होने पर भी बीज अधिक मात्रा में डाले जाते है।

प्रयोगों में यह देखा गया है कि पूर्व–पश्चिम व उत्तर–दक्षिण क्रास बुवाई करने पर गेहूँ की अधिक उपज प्राप्त होती है। इस विधि में कुल बीज व खाद की मात्रा, आधा–आधा करके उत्तर–दक्षिण और पूर्व–पश्चिम दिशा में बुवाई की जाती है। इस प्रकार पौधे सूर्य की रोशनी का उचित उपयोग प्रकाश संश्लेषण में कर लेते है, जिससे उपज अधिक मिलती है। गेहूँ मे प्रति वर्गमीटर 400–500 बालीयुक्त पौधे होने से अच्छी उपज प्राप्त होती है।

बुवाई के लिए जो बीज इस्तेमाल किया जाता है वह रोग मुक्त, प्रमाणित तथा क्षेत्र विशेष के लिए अनुशंषित उन्नत किस्म का होना चाहिए। रोगों की रोकथाम के लिए ट्राइकोडरमा की 04 ग्राम मात्रा 01 ग्राम कार्बेन्डाजिम के साथ प्रति किग्रा बीज की दर से बीज शोधन किया जा सकता है।

बुवाई की विधियां

बुवाई कूंड़ों में 5 सेमी. की गहराई पर सामान्य दशा में तथा विलम्ब से बुवाई की दशा में गहराई 4 सेमी. मीटर रखनी चाहिए। बुवाई हल के पीछे कूंड़ों मे या फर्टी सीडड्रिल द्वारा भूमि की उचित नमी पर करें। पलेवा करके ही गेहूँ की बुवाई करना श्रेयस्कर होता है। विलम्ब से बचने के लिए जीरोटिल बीज व खाद ड्रिल से बुवाई करना लाभदायक सिद्ध हुआ है।

आमतौर पर गेहूँ की बुवाई चार विधियों से (छिटककर, कूंड़ में चोगे या सीड ड्रिल से तथा डिबलिंग) से की जाती है। गेहूँ बुवाई हेतु स्थान विशेष की परिस्थिति अनुसार विधियाँ प्रयोग में लाई जा सकती है:

छिटकवां विधि

इस विधि में बीज को हाथ से समान रूप से खेत में छिटक दिया जाता है और पाटा अथवा देशी हल चलाकर बीज को मिट्टी से ढक दिया जाता है। इस विधि से गेहूँ उन स्थानो पर बोया जाता है, जहाँ अधिक वर्षा होने या मिट्टी भारी दोमट होने से नमी अपेक्षाकृत अधिक समय तक बनी रहती है। इस विधि से बोये गये गेहूँ का अंकुरण ठीक से नही हो पाता, पौध अव्यवस्थित ढंग से उगते है, बीज अधिक मात्रा में लगता है और पौध यत्र–तत्र उगने के कारण निराई–गुड़ाई में असुविधा होती है परन्तु अति सरल विधि होने के कारण कृषक इसे अधिक अपनाते है।

हल के पीछे कूंड़ में बुवाई

गेहूँ बोने की यह सबसे अधिक प्रचलित विधि है। हल के पीछे कूँड़ में बीज गिराकर दो विधियों से बुवाई की जाती है –

हल के पीछे हाथ से बुवाई (केरा विधि)

इसका प्रयोग उन स्थानों पर किया जाता है जहाँ बुवाई अधिक रकबे में की जाती है तथा खेत में पर्याप्त नमी रहती हो। इस विधि मे देशी हल के पीछे बनी कूंड़ो में जब एक व्यक्ति खाद और बीज मिलाकर हाथ से बोता चलता है तो इस विधि को केरा विधि कहते है। हल के घूमकर दूसरी बार आने पर पहले बने कूँड़ कुछ स्वयं ही ढंक जाते है। सम्पूर्ण खेत बो जाने के बाद पाटा चलाते है, जिससे बीज भी ढंक जाता है और खेत भी चोरस हो जाता है।

देशी हल के पीछे नाई बाँधकर बुवाई (पोरा विधि)

इस विधि का प्रयोग असिंचित क्षेत्रों या नमी की कमी वाले क्षेत्रों में किया जाता है। इसमें नाई, बास या चौंगा हल के पीछे बंधा रहता है। एक ही आदमी हल चलाता है तथा दूसरा बीज डालने का कार्य करता है। इसमें उचित दूरी पर देशी हल द्वारा 5–8 सेमी. गहरे कूंड़ में बीज पड़ता है। इस विधि मे बीज समान गहराई पर पड़ते है जिससे उनका समुचित अंकुरण होता है। कार्य क्षमता बढ़ाने के लिए देशी हल के स्थान पर कल्टीवेटर का प्रयोग कर सकते हैं क्योंकि कल्टीवेटर से एक बार में तीन कूंड़ बनते है।

शून्य कर्षण सीड ड्रिल विधि

धान की कटाई के उपरांत किसानों को रबी की फसल गेहूँ के लिए खेत तैयार करने पड़ते हैं। गेहूँ के लिए किसानों को अमूमन 5–7 जुताईयां करनी पड़ती हैं। ज्यादा जुताइयों की वजह से किसान समय पर गेहूँ

की बुवाई नहीं कर पाते, जिसका सीधा असर गेहूँ के उत्पादन पर पड़ता है। इसके अलावा इसमें लागत भी अधिक आती है। ऐसे में किसानों को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाता। शून्य कर्षण से किसानों का समय तो बचता ही है, साथ ही लागत भी कम आती है, जिससे किसानों का लाभ काफी बढ़ जाता है। इस विधि के माध्यम से खेत की जुताई और बिजाई दोनों ही काम एक साथ हो जाते हैं। इससे बीज भी कम लगता है और पैदावार करीब 15 प्रतिशत बढ़ जाती है। खेत की तैयारी में लगने वाले श्रम व सिंचाई के रूप में भी करीब 15 प्रतिशत बचत होती है। इसके अलावा खरपतवार का प्रकोप भी कम होता है, जिससे खरपतवारनाशकों का खर्च भी कम हो जाता है। समय से बुवाई होने से पैदावार भी अच्छी होती है।

फर्ब विधि

इस विधि में सिंचाई जल बचाने के उद्देश्य से ऊँची उठी हुई क्यारियाँ तथा नालियाँ बनाई जाती हैं। क्यारियो की चौड़ाई इतनी रखी जाती है कि उस पर 2–3 कूंड़े आसानी से बुवाई की जा सके तथा नालियाँ सिंचाई के लिए प्रयोग में ली जाती हैं। इस प्रकार लगभग आधे सिंचाई जल की बचत हो जाती है। इस विधि में सामान्य प्रचलित विधि की तुलना में उपज अधिक प्राप्त होती है। इसमें ट्रैक्टर चालित यंत्र से बुवाई की जाती है। यह यंत्र क्यारियाँ बनाने, नाली बनाने तथा क्यारी पर कूंड़ो में एक साथ बुवाई करने का कार्य करता है।

उर्वरक प्रबन्ध

फसल की प्रति इकाई पैदावार बहुत कुछ खाद एवं उर्वरक की मात्रा पर निर्भर करती है। गेहूँ में हरी खाद, जैविक खाद एवं रासायनिक खाद का प्रयोग किया जाता है। खाद एवं उर्वरक की मात्रा गेहूँ की किस्म, सिंचाई की सुविधा, बोने की विधि आदि कारकों पर निर्भर करती है। अच्छी उपज लेने के लिए भूमि में कम से कम 35–40 क्विंटल गोबर की अच्छे तरीके से सड़ी हुई खाद 50 किलो ग्राम नीम की खली और 50 किलो अरंडी की खली आदि इन सब खादों को अच्छी तरह मिलाकर खेत में बुवाई से पहले इस मिश्रण को समान मात्रा में बिखेर लें। इसके बाद खेत में अच्छी तरह से जुताई कर खेत को तैयार करें तत्पश्चात बुवाई करे।

मृदा परीक्षण के आधार पर संतुलित मात्रा में उर्वरकों का बुवाई के समय तथा सिंचाई के बाद प्रयोग किया जाय। रासायनिक उर्वरको में नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश मुख्य है। सिंचिंत गेहूँ में (बौनी किस्में) समय से बोने की दशा में 125 किलो नाइट्रोजन, 50 किलो फास्फोरस व 40 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिये। देशी किस्मों में 60:30:30 किग्रा. प्रति हेक्टेयर के अनुपात में उर्वरक देना चाहिए। एक तिहाई नत्रजन, सम्पूर्ण फास्फोरस (स्फुर) व पोटाश बुवाई के समय तथा 2/3 नत्रजन प्रथम सिंचाई के बाद देना उपयुक्त होता है। असिंचित गेहूँ की देशी किस्मों में 40 किलो नाइट्रोजन, 30 किलो स्फुर व 20 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर बुवाई के समय हल की तली में देना चाहिये। बौनी किस्मों में 60:40:30 किलों के अनुपात में नाइट्रोजन, स्फुर व पोटाश बुवाई के समय देना लाभप्रद पाया गया है।

सिचाई प्रबन्ध

गेहूँ की बौनी किस्मों से अधिकतम उपज के लिए सिंचाई आवश्यक है। गेहूँ की बौनी किस्मों को 30–35 हेक्टेयर सेमी. और देशी किस्मों को 15–20 हेक्टेयर सेमी. पानी की कुल आवश्यकता होती है। उपलब्ध जल के अनुसार गेहूँ में सिंचाई क्यारियाँ बनाकर करनी चाहिये। प्रथम सिंचाई में औसतन 5 सेमी. तथा बाद की सिंचाईयों में 7.5 सेमी. पानी देना चाहिए। सिंचाईयो की संख्या और पानी की मात्रा मृदा के प्रकार, वायुमण्डल का तापक्रम तथा बोई गई किस्म पर निर्भर करती है। फसल अवधि की कुछ विशेष क्रान्तिक अवस्थाओं पर बौनी किस्मों में सिंचाई करना आवश्यक होता है। सिंचाई की ये क्रान्तिक अवस्थाएँ निम्नलिखित हैं –

- पहली सिंचाई शीर्ष जड़ प्रवर्तन अवस्था पर अर्थात बोने के 20 से 25 दिन पर सिंचाई करना चाहिये। लम्बी किस्मों में पहली सिंचाई सामान्यतः बोने के लगभग 30–35 दिन बाद की जाती है।

- दूसरी सिंचाई दोजियां निकलने की अवस्था अर्थात बुवाई के लगभग 40–50 दिन बाद।
- तीसरी सिंचाई सुशांत अवस्था अर्थात बुवाई के लगभग 60–70 दिन बाद।
- चौथी सिंचाई फूल आने की अवस्था अर्थात बुवाई के 80–90 दिन बाद।
- पांचवी सिंचाई दूध बनने तथा शिथिल अवस्था अर्थात बोने के 100–120 दिन बाद।

पर्याप्त सिंचाईयां उपलब्ध होने पर बौने गेहूँ में 4–6 सिंचाई देना श्रेयस्कर होता है। यदि मिट्टी काफी हल्की या बलुई है तो 2–3 अतिरिक्त सिंचाईयो की आवश्यकता हो सकती है। सीमित मात्रा में जलापूर्ति की स्थित में सिंचाई का निर्धारण निम्नानुसार किया जाना चाहिएः

- यदि केवल दो सिंचाई की ही सुविधा उपलब्ध है, तो पहली सिंचाई बुवाई के 20–25 दिन बाद (शीर्ष जड़ प्रवर्तन अवस्था) तथा दूसरी सिंचाई फूल आने के समय बोने के 80–90 दिन बाद करनी चाहिये।
- यदि पानी तीन सिंचाइयों हेतु उपलब्ध है तो पहली सिंचाई शीर्ष जड़ प्रवर्तन अवस्था पर (बुवाई के 20–22 दिन बाद)। दूसरी तने में गाँठें बनने (बोने क 60–70 दिन बाद) व तीसरी दानो में दूध पड़ने के समय (100–120 दिन बाद) करना चाहिये।

गेहूँ की देशी लम्बी बढ़ने वाली किस्मों में 1–3 सिंचाईयाँ करते हैं। पहली सिंचाई बोने के 20–25 दिन बाद, दूसरी सिंचाई बोने के 60–65 दिन बाद और तीसरी सिंचाई बोने के 90–95 दिन बाद करते हैं। असिंचित अवस्था में मृदा नमी के प्रबन्धन हेतु खेत की जुताई कम से कम करनी चाहिए तथा प्रत्येक जुताई के बाद पाटा चलाना चाहिए। जुताई का कार्य प्रातः व सायंकाल में करने से वाष्पीकरण द्वारा नमी का ह्रास कम होता है। खेत की मेड़बन्दी अच्छी प्रकार से कर लेनी चाहिए, जिससे वर्षा के पानी को खेत में ही संरक्षित किया ता सके। बुवाई पंक्तियों में 5 सेमी. गहराई पर करना चाहिए। खाद व उर्वरकों की पूरी मात्रा, बोने के पहले कूंड़ों में 10–12 सेमी. गहराई में दें। खरपतवारों पर समयानुसार नियंत्रण करना चाहिए।

खरपतवार प्रबन्धन

गेहूँ के साथ अनेक प्रकार के खरपतवार भी खेत में उगकर पोषक तत्वों, प्रकाश, नमी आदि के लिए फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करते है। यदि इन पर नियंत्रण नही किया गया तो गेहूँ की उपज मे 10–40 प्रतिशत तक हानि संभावित है। बुवाई से 30–40 दिन तक का समय खरपतवार प्रतिस्पर्धा के लिए अधिक क्रांतिक रहता है। गेहूँ के खेत में चौड़ी पत्ती वाले और घास कुल के खरपतावारों का प्रकोप होता है।

गेहूँ के खेत में संकरी पत्ती के खरपतवार जैसे – गेहूँ का मामा (गेहुँसा), जंगली जई, दूब, राई घास आदि पाये जाते है। चौड़ी पत्ती खरपतवार जैसे – बथुआ, हिरनखुरी, गजरी, प्याजी, कृष्णनील, चटरी–मटरी व सत्यानाशी आदि खरपतवार प्रमुख रूप से पाये जाते हैं।

प्रायः खरपतवारनाशी द्वारा खरपतवार नियंत्रण को प्राथमिकता दी जाती है क्योंकि इससे मजदूरी कम लगती है तथा दूसरे पौधे टूटते नहीं हैं जैसा कि यांत्रिक विधि में होता है। खरपतवारनाशी रसायनों से नियंत्रण भी ज्यादा प्रभावी होता है क्योंकि दवाई से लाईनों के बीच के खरपतवार भी आसानी से नियंत्रित हो जाते हैं जोकि गेहूँ से मंडूसी की समानता होने के कारण निराई–गुड़ाई के समय छुट जाते हैं। आइसोप्रोटयूरॉन प्रतिरोधी क्षमता वाली खरपतवारों के नियंत्रण के लिए खरपतवार नाशियों को निम्न तरीके से उपयोग में लाना चाहिए।

गेहूँ उगने से पहले

गेहूँ उगने से पहले प्रयोग में लाने वाला खरपतवारनाशी सिर्फ पैंडीमैथालिन 30 ई. सी. है, जिसे 3.3 लीटर (1000 ग्राम सक्रिय तत्व) प्रति हेक्टेयर की दर से 700–750 लीटर पानी में घोल कर बिजाई के 0 से 3 दिन बाद स्प्रे करना चाहिए।

गेहूँ उगने के बाद

पिछले 3–4 वर्षो में कई खरपतवारनाशी ऐसे पाए गये हैं जो मंडूसी की उन प्रजातियों पर भी असरदार है जिन पर आइसोप्रोटयूरॉन का कोई असर नहीं होता। निम्नलिखित खरपतवारनाशियों को गेहूँ बुवाई के 30 से 35 दिन बाद या मंडूसी जब 2 से 3 पत्तों वाली हो तब प्रयोग में लाना चाहिए।

संकरी व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार

- सल्फोसल्फयूरॉन (लीडर) को 33.3 ग्राम/हे0 (25 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हे0) की दर से 250–300 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।
- मैट्रिब्यूजिन 70 डब्ल्यू.पी. (सेन्कोर) को 250 ग्राम/हे0 (175 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हे0) की दर से कम से कम 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
- सल्फोसल्फ्युरॉन 75 + मैट्रीसल्फ्युरॉन 5 प्रतिशत (टोटल) की 32 ग्राम/हे0 सक्रिय तत्व (कुल 40 ग्राम/हे0 व्यापारिक मात्रा)।
- मीजोसल्फ्युरॉन 3 प्रतिशत आइडोसल्फ्युरॉन 0.6 प्रतिशत (अटलांटिस) की 12 + 2.24 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हे0 (400 ग्राम/हे0 व्यापारिक मात्रा)।

केवल संकरी पत्ती वाले खरपतवार

- क्लोडीनाफोप 15 डब्ल्यू.पी. का 400 ग्राम/हे0 (60 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हे0) की दर से 250–300 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
- फिनोक्सा प्रोप इथाईल 10 ई.सी. के 800–1200 मिली/हे0 (80–120 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हे0) की दर से 250–300 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- पिनॉक्साडिन 5 अथवा 10 ई.सी. (एक्सिल) के 400–800 मिली/हे0 (35–40 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हे0) की दर से 250–300 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- ट्रालकोक्सीडीम (ग्रास्प) 10 ई.सी. का 3500 मिली/हे0 (350 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हे0) की दर से 250–300 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। आंकड़ों के आधार पर इन रसायनों का प्रति हेक्टेयर खर्चा 1400–1600 रूपये आता है।

कटाई–गहाई

जब गेहूँ के दाने पक कर सख्त हो जाय और उनमें नमी का अंश 20–25 प्रतिशत तक आ जाये, फसल की कटाई करनी चाहिये। कटाई हँसिये से की जाती है। बौनी किस्म के गेहूँ को पकने के बाद खेत में नहीं छोड़ना चाहिये, कटाई में देरी करने से दाने झड़ने लगते है और पक्षियों द्वारा नुकसान होने की संभावना रहती है। कटाई के पश्चात् फसल को 2–3 दिन खलिहान में सुखाकर मड़ाई शक्ति चालित थ्रेशर से की जाती है। कम्बाइन हारवेस्टर का प्रयोग करने से कटाई, मड़ाई तथा ओसाई एक साथ हो जाती है परन्तु कम्बाइन हारवेस्टर से कटाई करने के लिए, दानो में 20 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं होनी चाहिए, क्योकि दानो में ज्यादा नमी रहने पर मड़ाई या गहाई ठीक से नहीं होगी।

उपज एवं भंडारण

उन्नत सस्य तकनीक से खेती करने पर सिंचित अवस्था में गेहूँ की बौनी किस्मो से लगभग 50–60 क्विंटल दाना के अलावा 80–90 क्विंटल भूसा प्रति हेक्टेयर प्राप्त होता है। जबकि देशी लम्बी किस्मों से इसकी लगभग आधी उपज प्राप्त होती है। देशी किस्मों से असिंचित अवस्था में 15–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है। सुरक्षित भंडारण हेतु दानों में 10–12 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं होना चाहिए। भंडारण के पूर्व कोठियों तथा कमरो को साफ कर लें और दीवालों व फर्श पर मैलाथियान 50 प्रतिशत के घोल को 3 लीटर प्रति 100 वर्गमीटर की दर से छिड़कें। अनाज को बुखारी, कोठिलों या कमरे में रखने के बाद एल्युमिनियम फास्फाइड 3 ग्राम की दो गोली प्रति टन की दर से रखकर बंद कर देना चाहिए।

सरसों की बीज उत्पादन तकनीक

सर्वजीत* एवं एस के मिश्रा**

सरसों हमारे देश में एक अति महत्वपूर्ण तिलहनी फसल है, जिसके द्वारा वसा प्राप्त किया जाता है। जो मनुष्य के जीवन को चलाने में अपना स्थान बनाये हुए है। सरसो का उपयोग कई प्रकार से किया जाता है। हरे भागों को पशुओं को खिलाने में, एवं मानव द्वारा साग, के रुप में उपयोग किया जाता है। सरसों के महत्वपूर्ण उत्पादक देश भारत, चीन, पाकिस्तान, कनाडा हैं। विश्व में भारत 10.21 मिलियन टन सरसो पैदा करने वाला देश है।

भारत में सरसों की खेती मुख्यतः राजस्थान, हरियाणा, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, गुजरात, झारखंड, में की जाती है। इन राज्यों में राजस्थान में सरसों के अंतर्गत क्षेत्रफल एवं उत्पादन सबसे अधिक है। भारत में कुल सरसों उत्पादन में उत्तर प्रदेश का योगदान 10.49% है। वर्ष 2021 में उत्तर प्रदेश में कुल 1.35 मिलियन टंन उत्पादन हुआ सरसों के लिए मुख्यतः शुष्क एवं ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है। सरसों की खेती के लिए अम्लीय मृदा एवं अधिक वर्षा वाले स्थान उपयुक्त नही होते हैं।

बीज स्रोत– आधार बीज उत्पादन के लिए प्रमाणित बीज स्रोत से प्रजनक या आधार बीज तथा प्रमाणित बीज उत्पादन के लिए आधार बीज प्रयोग करना चाहिए। बीज थैलों पर लगे टैग लेबिल से किस्म से जांच करने के बाद ही बुवाई करनी चाहिए।

भूमि का चयन–बीज उत्पादन के लिए ऐसे खेत का चयन करना आवश्यक होता है, जिसमें पिछले सीजन में सरसो की फसल ना ली गई हो बीज उत्पादन के लिए भूमि का खरपतवार एवं बीमारी रहित होना चाहिए तथा जल भराव वाला खेत नही होना चाहिए।

पृथक्करण दूरी– आधार बीज उत्पादन के लिए 100 मीटर प्रमाणित बीज उत्पादन के लिए 50 मीटर की दूरी अन्य किस्मों के खेत में होना चाहिए।

भूमि की तैयारी– सरसो के लिए हल्की रेतीली भुरभुरी मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसके लिए खरीफ की फसल की कटाई के बाद एक गहरी जुताई मिट्टी पलट हलसे और 3 जुताई हैरो या देसी हल से करना लाभदायक होता है। मिट्टी में नमी को सुरक्षित रखने हेतु पाटा लगाना आवश्यक होता है। कीटों के नियंत्रण के लिए अंतिम जुताई के समय क्यूनालफास 1.5 प्रतिशत 25 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए, उपज बढ़ाने के लिए एजेटोबैक्टर एवं पीएसबी कल्चर का प्रयोग लाभकारी होता है।

बुवाई का समय एवं विधि –बुवाई का समय क्षेत्र की जलवायु सरसों की किस्म एवं फसल चक्र पर निर्भर करता है। उतर प्रदेश में सरसों की बुवाई का समय मध्य अक्टूबर से मध्य नवंबर तक होता है। देर से बुवाई करने पर माहू एवं अन्य कीटों का प्रकोप बढ़ जाता है। बुवाई हमेशा कतारों में करनी चाहिए। कतार से कतार की दूरी 40 से 45 सेंटीमीटर रखना चाहिए।

बीज दर – सरसों की किस्मों एवं फसल (मिश्रित या एकल) पर निर्भर करती है। शुद्ध फसल बोने के लिए 5 से 6 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर मिश्रित फसल उगाने में 2 से 3 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है।

बीज उपचार – बीज जनित रोगों से फसल को बचाने के लिए 2.5 ग्राम थीरम प्रति किलोग्राम की दर से बीज को उपचारित करें तथा कीटों से बचाव के लिए इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यूपी 10 मिली0 प्रति किलोग्राम बीज दर से उपचारित करें। कीटनाशक प्रयोग करने के बाद जैव उर्वरक पी एस बी और एजेटोबैक्टर की 20 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम की दर से बीज उपचारित करें।

खाद एवं उर्वरक–उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही करना चाहिए। सरसों में कम समय में शीघ्र वृद्धि होती है। इसके द्वारा शीघ्रता से पोषक तत्व ग्रहण किए जाते हैं। सिंचित क्षेत्रों में 6 से 10 टन सड़ी गोबर की खाद अंतिम जुताई के समय एवं 90 से 110 किलोग्राम नाइट्रोजन, फास्फोरस 50 से 60 किलोग्राम, पोटाश 45 से 50 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर प्रयोग करना चाहिए। फास्फोरस का प्रयोग सिंगल सुपर फास्फेट के रुप में करते हैं तो अधिक लाभ होता है। यदि सिंगल सुपर फास्फेट का प्रयोग नही कर रहे है तों 40 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से सल्फर का

*विषय वस्तु विशेषज्ञ बीज विज्ञान, कार्यक्रम सहायक–सस्य विज्ञान **कृषि विज्ञान केन्द्र, सोहना सिद्धार्थनगर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि प्रौद्यौगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या 224229

प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन को यदि अमोनियम सल्फेट के रुप में देते है तो उपज में वृद्धि होती है एवं पोटाश को पोटेशियम सल्फेट के रुप मे देना लाभ दायक होता है। फास्फोरस एवं पोटाश की कुल मात्रा बुवाई के समय प्रयोग करना चाहिए। जबकि नाइट्रोजन की आधी मात्रा बुवाई के समय व आधी मात्रा बुवाई के 30 से 35 दिन बाद प्रथम सिंचाई के बाद प्रयोग करना चाहिए।

निराई गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण– फसल की प्रारंभिक अवस्था जैसे 15 से 20 दिन के अंदर घने पौधों को उखाड़ कर उनके बीच की दूरी 15 सेंटीमीटर कर देना चाहिए। फसल में एक से दो निराई गुड़ाई प्रथम सिंचाई के पहले और दूसरी प्रथम सिंचाइ के बाद। रासायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण करने के लिए आइसोप्रोट्यूरान या एलाक्लोर या टोक ई 25 (नाइटोफेन) के सक्रिय अवयव की 1.0 किलोग्राम मात्रा या पेंडीमैथलीन 30 ई सी 3.3 लीटर प्रति हेक्टेंयर कीदर से 800 से 1000 लीटर पानी में घोलकर फसल बोने के बाद अंकुरण से पहले छिड़काव करना चाहिए या फसल की बुवाई के पूर्व फ्लूक्लोरैलिन 45 ईसी की 2.2 ली/1000 ली पानी में घोलकर प्रति हेक्टेंयर कि की दर से छिड़काव करें और जुताई करके मिट्टी मिला दें।

सिंचाई – सरसों की फसल में 2 अवस्थाओं जैसे फूल आने के समय एवं दाना भरते समय नमी की कमी नही होनी चाहिए प्रायः इस फसल में दो सिंचाई की आवश्यकता होती है। प्रथम सिंचाई बुवाई के 30 से 35 दिन बाद तथा दूसरी दाना बनने की अवस्था (60–65 दिन) में करे।

कीट एवं रोग नियंत्रण

आरा मक्खी– इस कीट की गिडारें सरसों कुल की सभी फसलों को हानि पहुचाती हैं। इसकी सूड़ियां पत्तियों को किनारे से अथवा पत्तियों में छेद कर तेजी, से खाती हैं।

रोकथाम–इसके लिए मैलाथियान 5% की चूर्ण 20 से 25 किलोग्राम, मिथाइल पैराथियान 2.0 प्रतिशत धूल 20 किलोग्राम, क्यूनालफास 1.5 प्रतिशत धूल 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेंयर की दर से प्रयोग करें।

माहू– इसका प्रकोप दिसंबर से प्रारंभ होता है। मौसम नम होने पर इसका प्रकोप अधिक होता है। यह कीट फूलों एवं पत्तियो का रस चूसते हैं और दाना नही बन पाता है।

नियंत्रण– मैलाथियान 50% ई सी 2 लीटर क्लोरोपायरीफास् 20 ईसी 0.75 लीटर मिथाइल पैराथियान 2% धूल 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेंयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

बिहार की रोमिल सूड़ी –यह सूड़ी बालदार काले नारंगी रंग की होती है। तथा पूरा शरीर बालों से ढ़का रहता है। यह सूड़ी झुंड मे रहकर पत्तों को खाती है। अधिक प्रकोप होने पर पौधा पत्ती विहीन हो जाता है। इसके नियंत्रण के लिए मैलाथियान 5% की 20 से 25 किलोग्राम का बुरकाव अथवा मैलाथियान 50% ईसी की 1.50 लीटर अथवा क्यूनालफास, 25% ई सी की 1.25 लीटर प्रति हेक्टेंयर की दर से 600 से 750 लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

चित्रित बग – यह धंब्बे दार कीट होते हैं। जिनके शिशु एवं वयस्क मुलायम पत्तियों शाखाओं, तनों, फूलों एवं फलियों का रस चूसते हैं। प्रभावित पत्तियों के किनारे का भाग सूख जाता है। प्रभावित फलियों में दाने कम बनते हैं। इसके नियंत्रण के लिए क्लोरोपायरीफास् 20% ई सी के 1.0 लीटर अथवा मोनोक्रोटोफॉस 36% एस एल की 500 मिली लीटर प्रति हेक्टेंयर की दर से 600 से 750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

अवांछनीय पौधों को निकालना –फसल की हर अवस्था पर निरीक्षण करना आवश्यक है एवं बुवाई की किस्म से भिन्न लक्षण वाले पौधों को उखाड़ कर खेत से निकाल देना चाहिए। यह प्रक्रिया फसल में फूल आने से पहले करना आवश्यक होता है। खेत से रोगी पौधो बीमारी से ग्रसित पौधों को शीघ्र ही निकाल देना चाहिए तथा खेत में उगे हुए सत्या नाशी पौधो को फूल आने से पहले ही उखाड़ देना चाहिए।

कटाई मड़ाई– सरसों कुल की सभी फसलों की कटाई 110 से 155 दिन के बाद की जाती है जब 75% फलियां सुनहरे रंग की हो जाएं फसल को काट कर सुखाकर व मड़ाई करके बीज अलग करना चाहिए। यदि पकने के पश्चात कटाई नही की जाती है तो फलियां चटकने लगती हैं मड़ाई के पश्चात बीज को सुखाकर (नमी 7–9%) ही भंडारित करना चाहिए।

उपज –सिंचित क्षेत्रों में राई सरसो की उपज 20 से 30 कुंटल प्रति हेक्टेंयर एवं असिंचित क्षेत्रो में 15 से 20 कुंटल प्रति हेक्टेंयर प्राप्त होती है।

चने की उन्नत खेती

संजीत कुमार

दलहनी फसलों में चना का प्रमुख स्थान है। चने की फसल से अधिक पैदावार प्राप्त करने हेतु निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक हैः–

भूमिः चने के लिए दोमट या भारी दोमट भूमि जहां पानी के निकास का उचित प्रबन्ध हो, उपयुक्त होती है।

भूमि की तैयारः पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से एक गहरी जुताई व दो जुताईयां देशी हल अथवा कल्टीवेटर से करके पाटा लगाकर खेत को तैयार कर लेना चाहिए।

संस्तुत प्रजातियां–

देशी चना प्रजातियां–

जे.जी. 74, जे.जी. 130, जे.जी. 315, बी-जी- 391, विशाल, अवरोधी, पूसा–256, के.डब्लू. राधे, जे जी 16, के–850, डी.सी.पी. 92–3, आधार (आर.एस.सी.जी. –1) डब्लूसी.जी–2, के.जी.डी.–1168, पूसा–372, उदय, पन्त जी– 186

काबुली चना प्रजातियां–

पूसा–1003, एच.के. 94–134, 3. चमत्कार (वी.जी. 1053), जे.जी.के.–1, शुभ्रा, उज्जवल

बीज दर– छोटे दाने का 75–80 किग्रा. प्रति हे. तथा बड़े दाने की प्रजाति का 90–100 किग्रा./हेक्टर।

बीजोपचार–

राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार–

अलग अलग दलहनी फसलों का अलग अलग राइजोबियम कल्चर होता है चने हेतु राइजोबियम साइसेरी कल्चर का प्रयोग होता है। एक पैकेट 200 ग्राम कल्चर 10 किग्रा बीज उपचार के लिए पर्याप्त होता है। बाल्टी में 10 किग्रा. बीज डालकर अच्छी प्रकार मिला दिया जाता है जिससे सभी बीजों पर कल्चर लग जायें। इस प्रकार राइजोबियम कल्चर से उपचारित हुए बीजों को कुछ देर बाद छाया में सुखा लेना चाहिए।

सावधानीः राइजोबियम कल्चर से बीज को उपचारित करने के बाद धूप मे ंनही ंसुखाना चाहिए और जहां तक सम्भव हो सके बीज उपचार दोपहर के बाद करना चाहिए ताकि बीज शाम को ही बोया जा सके।

बीज शोधनः बीज जनित रोग से बचाव के लिए थीरम 2 ग्राम या मैंकोजेब 2 ग्राम या 4 ग्राम ट्रइाकोडरमा अथवा थीरम 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीज को बोने से पूर्व शोधित करना चाहिए।

बुवाईः असिंचित दशा में चने की बुवाई अक्टूॅबर के द्वितीय अथवा तृतीय सप्ताह तक अवश्य कर देनी चाहिए। सिंचित दशा में बुवाई नवम्बर के द्वितीय सप्ताह तक तथा पछेती बुआई दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक की जा सकती है। बुवाई हल के पीछे कूंड़ो में 6–7 सेमी की गहराई पर करनी चाहिए। कूंड से कूंड़ की दूरी असिंचित तथा पछेती दशा में बुवाई में 20–25 सेमी तथा सिंचित भूमि में 45 सेमी रखनी चाहिए।

उर्वरकः सभी प्रजतियों के लिए 20 किग्रा नत्रजन, 60 किग्रा फास्फोरस, 20 किग्रा पोटाश एवं 20 किग्रा. गन्धक का प्रयोग प्रति हे. की दर से कूंड़ों में करना चाहिए। संस्तुति के आधार पर उर्वरक प्रयोग अधिक लाभकारी पाया गया है। असंचित अथवा देर से बुवाई की दशा में 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का फूल आने के समय छिड़काव करें।

सिंचाईः प्रथम सिंचाई आवश्यकतानुसार बुआई के 45–60 दिन बाद (फूल आने के पहले) तथा दूसरी फलियों में दाना बनते समय, 75–80 दिन बाद की जानी चाहिए। यदि जाड़े की वर्षा हो जाये तो दूसरी सिंचाई की आवश्यकता नही होगी। फूल आते समय सिंचाई न करें अन्यथा लाभ के बजाए हानि हो जाती है।

फसल सुरक्षा–

(क) खरपतवार नियंत्रण

चने की फसल में अनेक प्रकार के खरपतवार जैसे बथुआ, खरतुआ, मोरवा, प्याजी, मोथा, दूब इत्यादि उगते हैं। ये खरपतवार फसल के पौधों के साथ पोषक

वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, अमिहित, जौनपुर–2

तत्वों, नमी, स्थान एवं प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा करके उपज को प्रभावित करते हैं। इसके अतिरिक्त खरपतवारों के द्वारा फसल में अनेक प्रकार की बीमारियों एवं कीटों का भी प्रकोप होता है जो बीज की गुणवत्ता को भी प्रभावित करते हैं। खरपतवारों द्वारा होने वाली हानि को रोकने के लिए समय पर नियंत्रण करना बहुत आवश्यक है। चने की फसल में दो बार गुड़ाई करना पर्याप्त होता है। प्रथम गुड़ाई फसल बुवाई के 30–35 दिन पश्चात व दूसरी 50–55 दिनों बाद करनी चाहिये। यदि मजदूरों की उपलब्धता न हो तो फसल बुवाई के तुरन्त पश्चात पैन्डीमैथालीन की 2.5 लीटर मात्रा को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति है0 की दर से खेत में समान रूप से मशीन द्वारा छिड़काव करना चाहिये। फिर बुवाई के 30–35 दिनों बाद एक गुड़ाई कर देनी चाहिये। इस प्रकार चने की फसल में खरपतवारों द्वारा होने वाली हानि की रोकथाम की जा सकती है।

(ख) प्रमुख कीट

1. कटुआ कीट,
2. अर्द्धकुण्डलीकार कीट (सेमी लूपर)
3. फली बेधक कीट–

नियंत्रण के उपाय–

1. गर्मी में गहरी जुताई करनी चाहिए।
2. समय से बुवाई करनी चाहिए।
3. खेत में जगह–जगह सूखी घास के छोटे छोटे ढेर को रख देने से दिन में कटुआ कीट की सूड़ियॉ छिप जाती है जिसे प्रातः काल इकट्ठा कर नष्ट कर देना चाहिए।
4. खेत के चारो ओर गेंदे के फूल को ट्रैप क्राप के रूप में प्रयोग करना चाहिए।
5. फसल की निगरानी करते रहना चाहिए। फूल एवं फलियॉ बनते समय फली बेधक कीट के लिए 5 गंधपाश (फेरोमोन ट्रैप) प्रति हे. की दर से खेत में लगाना चाहिए।
6. यदि कीट का प्रकोप आर्थिक क्षति स्तर पार कर गया हो तो निम्नलिखित कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए। कटुआ चने की फसल को कटुआ अत्यधिक नुकसान पहुँचाता है। इसकी रोकथाम के लिए 20 कि.ग्रा./हे. की दर से क्लोरापायरीफॉस भूमि में मिलाना चाहिए।
7. फली छेदक इसका प्रकोप फली में दाना बनते समय अधिक होता हैं। नियंत्रण नही करने पर उपज में 75 प्रतिशत कमी आ जाती है। इसकी रोकथाम के लिए मोनाक्रोटोफॉस 40 ई.सी 1 लीटर दर से 600–800 ली. पानी में घोलकर फली आते समय फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

(ग) रोग नियंत्रण

जड़ सड़न रोग : बुआई के 15–20 दिन बाद पौधा सूखने लगता है। पौधे को उखाड़ कर देखने पर तने पर रूई के समान फफूँदी लिपटी हुए दिखाई देती है। इसे अगेती जड़ सडन कहते हैं। इस रोग का प्रकोप अक्टूबर से नवम्बर तक होता है। पछेती जड़ सड़न में पोधे का तना काला होकर सड़ जाता है तथा तोड़ने पर आसानी से टूट जाता है। इस रोग का प्रकोप फरवरी एवं मार्च में अधिक होता है।

उकठा रोग : इस रोग में पौधे धीरे–धीरे मुरझाकर सूख जाते हैं। पौधे को उखाड़ कर देखने पर उसकी मुख्य जड़ एवं उसकी शाखायें सही सलामत होती है। छिलका भूरा रंग का हो जाता हैं तथा जड़ को चीर कर देखें तो उसके अन्दर भूरे रंग की धारियाँ दिखाई देती है। उकठा का प्रकोप पौधे के किसी भी अवस्था में हो सकता है।

एस्कोकाइटा पत्ती धब्बा रोग : इस रोग में पत्तियों एवं फलियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। अनुकूल परिस्थिति में धब्बे आपस में मिल जाते हैं जिससे पूरी पत्ती झुलस जाती है।

प्रबन्धन के उपाय :

(क) गर्मियों में मिट्टी पलट हल से जुताई करने से मृदा जनित रोगों के नियंत्रण में सहायता मिलती है।

(ख) जिस खेत में प्रायः उकठा लगता हो तो यथा सम्भव उस खेत में 3–4 वर्ष तक चने की फसल नहीं लेनी चाहिए।

(ग) अगेती जड़ सड़न से बचाव हेतु नवम्बर के द्वितीय सप्ताह में बुआई करनी चाहिए।

(घ) उकठा रोग निरोधक किस्मों का प्रयोग करना

(शेष पृष्ठ 13 पर)

प्राकृतिक खेतीः सिद्धांत एवं रणनीतियां

विनीत धीर* एवं संजीव कुमार**

प्राकृतिक खेती कृषि में आदि काल से समाहित एक पद्धति है जो खेती की सभी आवश्यक अवयवो को उनके प्राकृतिक अवस्था में बनाए रखती है। प्राकृतिक खेती को जापान के एक दर्शन शास्त्री मासानोबू फुकुओका ने अपने पुस्तक 'द वन स्ट्रा रिवोल्यूशन' में सन 1975 में प्रतिपादित किया। इसलिए प्राकृतिक खेती को "फुकुओका विधि " या "प्राकृतिक तरह से खेती करना" भी कहते हैं। कालांतर में हमारे देश में फुकुओका की प्राकृतिक खेती को श्री प्रताप अग्रवाल ने ऋषि खेती का नाम दिया। भारत प्रकृति एवं संस्कृति से एक कृषि आधारित देश रहा है। जलवायु परिवर्तन एवं ग्लोबल वार्मिंग के संभावित प्रलय से अब समय आ गया है कि हम प्राकृतिक खेती को बृहद स्तर पर अपनाए और वैश्विक अवसर का लाभ उठाएं।

प्राकृतिक खेती पशुधन पर आधारित एक पारंपरिक स्वदेशी कृषि पद्धति है। यह किसी भी रासायनिक उर्वरक या कीटनाशक या जैविक खाद, जैव उर्वरक, जैव कीटनाशकों का प्रयोग नहीं करती है। यह खेती, खेती की लागत को कम करने, लाखों लोगों को कीटनाशक एवं रसायन रहित स्वस्थ भोजन प्रदान करते हुए घातक बीमारियों से बचाने और प्रकृति एवं पर्यावरण में संतुलन बनाए रखने के उद्देश्य से की जाती है। यह खेती समृद्धि का साधन होने के साथ–साथ हमारी धरती मां का सम्मान और सेवा भी है।

प्राकृतिक खेती के सिद्धांत

प्रथम सिद्धांतः

खेतों में जुताई न करना पहला सिद्धांत है यानी न तो मिट्टी को पलटना और न ही उनमें जुताई करना। केंचुए, छोटे प्राणियों, सूक्ष्मजीव और पौधों की जड़ें सभी अपने आप होने वाली प्राकृतिक जुताई में योगदान करते हैं।

द्वितीय सिद्धांतः

इस सिद्धांत के अनुसार किसी भी प्रकार के रासायनिक उर्वरक या खाद का उपयोग निषिद्ध है। इस प्रक्रिया में केवल हरी खाद और गोबर का उपयोग किया जाता है।

तृतीय सिद्धांतः

निंदाई–गुड़ाई न की जाए। न तो हलों से न शाकनाशियों के प्रयोग द्वारा। खरपतवार मिट्टी को उर्वर बनाने तथा जैव–बिरादरी में संतुलन स्थापित करने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। बुनियादी सिद्धांत यही है कि खरपतवार को पूरी तरह समाप्त करने के बजाए नियंत्रित किया जाना चाहिए।

चतुर्थ सिद्धांतः

रसायनों पर निर्भर रहने से पूरी तरह बचना है। जुताई और उर्वरक उपयोग जैसी अनुचित तकनीकों के कारण, कमजोर पौधे खेतों में विकसित होने लगे, जिससे रोग और कीट असंतुलन के पहले लक्षण दिखाई देने लगे। हस्तक्षेप न करने से प्रकृति का पूर्ण संतुलन बना रहता है।

प्राकृतिक खेती का महत्व

भोजन के अधिकार पर संयुक्त राष्ट्र की 2017 की रिपोर्ट के अनुसार, कृषि विज्ञान पूरी दुनिया की आबादी को खिलाने और ठीक से पोषक तत्व प्रदान करने के लिए पर्याप्त उपज प्रदान करने में सक्षम है। ऐसे कई उदाहरण मौजूद हैं जहां गांव प्राकृतिक खेती की ओर आगे बढ़ते हुए ग्रामीण जीवन को बदल रहे हैं, और शहरों में सफल प्राकृतिक खेती की पहल भी की जा रही है। बिना सरकारी सहयोग के इन सफलताओं को देखते हुए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यदि इसमें राज्य का सहयोग प्राप्त होता तो कई किसान लाभान्वित हो सकते थे। हालाँकि भारत सरकार लोगों को

प्राकृतिक खेती का समर्थन करने के लिए प्रोत्साहित करती है, लेकिन इस सहायता में वित्तीय सहायता, जनसंपर्क और शिक्षा भी शामिल होनी चाहिए। भारत उदारतापूर्वक उर्वरकों के लिए सब्सिडी प्रदान करता है। 1976–1977 में 60 करोड़ रुपये से आज 75,000 करोड़ रुपये तक, इस सब्सिडी का विस्तार हुआ है। सिंथेटिक उर्वरकों के लिए केंद्रीय सब्सिडी भारत के प्रमुख वित्तीय बोझों में से एक रही है। इसके विपरीत

*शोध छात्र, **प्रोफेसर, सस्य विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

जैविक उद्योग को मुश्किल से 500 करोड़ रुपये सब्सिडी के रूप में मिलते हैं। इसके अलावा, परम्परागत कृषि विकास योजना (पीकेवीवाई) और जैविक मूल्य श्रृंखला विकास अभियान में पूर्वोत्तर क्षेत्र की भागीदारी गंभीर रूप से प्रतिबंधित है। भारत की कुल खेती योग्य भूमि (181.95 मिलियन हेक्टेयर) का केवल 23.02 मिलियन हेक्टेयर, या 1.27 प्रतिशत, प्राकृतिक खेती के लिए उपयोग किया जाता है।

प्राकृतिक खेती की आवश्यकता

पिछले कुछ वर्षों में कृषि को भारी नुकसान हुआ है। इसका मुख्य कारण हानिकारक कीटनाशकों का प्रयोग है। साथ ही इसमें लागत भी बढ़ रही है। भूमि की प्राकृतिक सुंदरता भी बदल रही है, जो काफी हानिकारक हो सकती है। रासायनिक खेती के परिणामस्वरूप पर्यावरण और लोगों के स्वास्थ्य में काफी गिरावट आई है। किसानों की आधी फसल की उपज में उर्वरकों और कीटनाशकों का योगदान होता है। अगर किसान खेती से अपनी आय बढ़ाना चाहता है तो उसे प्राकृतिक खेती की ओर रुख करना चाहिए। हम कृषि का उपयोग अपने द्वारा उपभोग किए जाने वाले भोजन और पेय की एक बड़ी मात्रा का उत्पादन करने के लिए करते हैं। इन भोजन में जिंक और आयरन जैसे बहुत सारे पोषक तत्व होते हैं जो हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत अच्छे होते हैं। रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग किया जाता है, जिससे इन भोजन की गुणवत्ता कम हो जाती है। यह हमारे शरीर के लिए हानिकारक है। कृत्रिम उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग के कारण भूमि की उर्वरता नष्ट हो रही है। यह पर्यावरण के लिए विशेष रूप से हानिकारक है, और इससे बने खाद्य उत्पादों का मानव और पशु स्वास्थ्य दोनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग के परिणामस्वरूप मिट्टी की उर्वरता में भारी कमी आई है। जिससे मिट्टी में पोषक तत्वों का संतुलन बिगड़ जाता है। इस मिट्टी की बिगड़ती उर्वरता को देखते हुए प्राकृतिक खेती करना महत्वपूर्ण हो गया है।

प्राकृतिक खेती के लाभ

1. किसानों की दृष्टि से

- भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि हो जाती है।
- सिंचाई अंतराल में वृद्धि होती है।
- रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होने से लागत में कमी आती है।
- फसलों की उत्पादकता में वृद्धि होती है ।
- बाजार में जैविक उत्पादों की मांग बढ़ने से किसानों की आय में भी वृद्धि होती है।

2. मिट्टी की दृष्टि से

- जैविक खाद के उपयोग करने से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है।
- भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ती है।
- भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होगा।

3. पर्यावरण की दृष्टि से

- भूमि के जलस्तर में वृद्धि होती है।
- मिट्टी, खाद्य पदार्थ और जमीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी आती है।
- कचरे का उपयोग, खाद बनाने में, होने से बीमारियों में कमी आती है।
- फसल उत्पादन की लागत में कमी एवं आय में वृद्धि होती है ।
- अंतरराष्ट्रीय बाजार की स्पर्धा में जैविक उत्पाद की गुणवत्ता की अधिक मांग होती है ।

रणनीतियां

वर्तमान में भारतीय कृषि रासायनिक खेती का ही अभिप्राय है जिसके समन्वित समावेश के फल स्वरुप ही देश में रिकॉर्ड खाद्यान्न उत्पादन 310.74 मिलियन टन (2020–21) हुई है। प्रायः यह दिग्दर्शित किया जाता है कि भारत जैसे बड़ी आबादी वाले देश में यदि वर्तमान रसायन खेती में प्राकृतिक या जैविक खेती की हिस्सेदारी बढ़ाई जाती है तो खाद्यान्न उत्पादन के रिकॉर्ड लक्ष्य 315.12 मिलियन टन (2021–22) की पूर्ति नहीं हो पाएगी और देश में भुखमरी आ सकती है। । रासायनिक खेती की मकड़जाल से छोटे किसान एवं उपभोक्ताओं को जीवन यापन एवं नीति निर्धारकों के चिंतन एवं रणनीतियां निर्धारण करने में परेशानी हो रही है। रासायनिक कीटनाशकों और उर्वरकों के उपयोग के कारण किसानों को वर्तमान में कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। भारत में 86

प्रतिशत छोटे और सीमांत किसान परिवार हैं। रासायनिक खेती किसानों को कर्ज में धकेलती है और उर्वरक निर्माताओं का पक्ष लेती है। बड़े सरकारी उर्वरक सब्सिडी से छोटे किसानों को मदद नहीं मिलती है, लेकिन उर्वरक उत्पादकों को उनसे लाभ होता रहा है।

पारंपरिक खेती के लिए संसाधन और प्रशिक्षण प्रदान करने वाली "परंपरागत कृषि विकास योजना" के तहत एक उप योजना "भारतीय प्राकृतिक कृषि पद्धति" 2020–21 में शुरू की गई, जिससे अंतर्गत 49.80 करोड रुपए बजट के साथ 8 राज्यों में लगभग 4.10 लाख हेक्टेयर में विभिन्न फसलों की प्राकृतिक खेती की गई। किसानों के लाभ के लिए उक्त योजना के तहत पूरे देश में 30 हजार क्लस्टर बनाएं गए हैं। प्राकृतिक खेती को नमामि गंगे परियोजना से जोड़कर गंगा नदी के किनारे प्राकृतिक खेती कृषि गलियारा बनाने के लिए एक अलग अभियान चलाया गया है।

प्राकृतिक खेती की उपज के प्रमाणीकरण के लिए गुणवत्ता आश्वासन प्रणाली बनाई गई है। हमारे देश की प्राचीन प्राकृतिक कृषि एवं लोकप्रिय संस्कृति से संबंधित ज्ञान पर शोध कर आधुनिक समय की मांग के अनुसार किसानों तक पहुंचाने की ठोस योजना भी बनाई गई है। इस क्रम में नीति आयोग ने भी कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के साथ मिलकर प्राकृतिक कृषि पद्धतियों पर वैश्विक विशेषज्ञों के साथ कई उच्चस्तरीय विचार–विमर्श किए है। जिसके फलस्वरूप प्राकृतिक खेती में द्रुतगामी परिणाम होंगे।

उत्तर प्रदेश में गाय पर आधारित प्राकृतिक खेती कार्यक्रम कृषि विभाग, कृषि विश्वविद्यालय अधीनस्थ कृषि विज्ञान केंद्र तथा गंगा यात्रा, इत्यादि के अंतर्गत बृहद स्तर पर क्रियान्वित है। इस खेती के गहन परिवर्धन हेतु उत्तर प्रदेश सरकार प्रगतिशील कृषकों को जैसे श्री विवेक चतुर्वेदी (कानपुर),श्री श्याम बिहारी गुप्ता (झांसी) और श्री हिमांशु गंगवार (फर्रुखाबाद) को किसान सम्मान दिवस पर 75 हजार रुपए नगद पुरस्कार से सम्मानित कर चुकी है। उत्तर प्रदेश में प्राकृतिक खेती की भारत सरकार के दिशा निर्देश के अनुरूप एक सुदृढ़ एवं लक्ष्य निर्धारित कार्य योजना अग्रसर है जिसके सफलतापूर्वक क्रियान्वयन के फलस्वरूप उत्तर प्रदेश निश्चित रूप से दूसरे राज्यों को प्राकृतिक खेती का एक मॉडल प्रस्तुत करेगा।

(पृष्ठ 10 का शेष)

चाहिए। प्रभावित क्षेत्रो में फसल चक्र अपनाना लाभकर होता है। प्रभावित पौधे को उखाडकर नष्ट करना अथवा गड्ढे में दबा देना चाहिए। बीज को कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम या ट्राइकोडर्मा विरडी 4 ग्राम/किलो बीज की दर से उपचारित कर बोना चाहिए।

(ड.) बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत+कार्बेन्डाजिम 50 प्रतिशत (2:1) 3.0 ग्राम अथवा ट्राइकोडरमा 4.0 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से शोधित कर बुआई करना चाहिए।

(च) भूमि जनित एवं बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु बायोपेस्टीसाइड (जैव कवकनाशी) ट्राइकोडरमा विरिडी 1 प्रतिशत डब्लू.पीअथवा ट्राइकोडरमा हारजिएनम 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. प्रति हे. 60–75 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुआई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से चना के बीज/भूमि जनित रोगों का नियंत्रण हो जाता है।

(छ) एस्कोकाइटा पत्ती धब्बा रोग के नियंत्रण हेतु मैंकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा कापर आक्सीक्लोराइड 50 प्रतिशत डब्लू. पी. की 3.0 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से लगभग 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

कटाई–मढ़ाई: जब फलियॉ सुनहरे रंग की हो जायें, फसल को काट कर सुखाकर व मड़ाई करके बीज अलग करना चाहिए। देर करने से बीजों के झड़ने की आशंका रहती है। बीज को खूब सुखाकर (12–14 प्रतिशत नमी पर) ही भण्डारण करना चाहिए।

पैदावार : वैज्ञानिक विधि से खेती करने पर असिंचितं दशा में पैदावार 15–18 कु0/हे0 है तथा सिंचितं दशा में 30–35 कु0/हे0 होती है।

धान के पुआल (पराली) का मशीनों द्वारा प्रबन्धन

शैलेश कुमार* सिंह एवं अश्विनी कुमार सिंह**

गेहूँ और धान की प्रमुख फसलें हैं और इनकी कटाई अब ज्यादातर कंबाईन हारवेस्टर के साथ की जा रही है। गेहूँ और धान की पैदावार के साथ-साथ दोनों फसलों से हर साल क्रमशः तकरीबन 14 एवं 20 मिलियन टन भूसा/पराली पैदा होती है। गेहूँ के तने की संभाल ज्यादातर (80-90%) थ्रेशर व स्ट्रॉ रीपर की मदद से भूसा बना लिया जाता है परन्तु धान के पराली के रख-रखाव की समस्या आज भी वैसे ही बनी हुई है तथा किसान पराली को आग लगा देता है जिससे वातावरण में प्रदूषण बढ़ता है।

1. धान की पुआल (पराली) को जलाने के नुकसान

धान की फसल की कम्बाईन हारवेस्टर से कटाई के बाद समय के अभाव के कारण, गेहूँ की फसल की बुआई से पहले, किसान पराली को आग लगा देते हैं, जिससे खेतों को तो नुकसान होता ही है साथ ही मनुष्यों व पशु-पक्षियों की सेहत पर भी बुरा असर पड़ता है। आग लगाने से मिट्टी के पोषक तत्व नष्ट होते हैं तथा उसकी उपजाऊ शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा हमारे जीवन पर भी दुष्प्रभाव पड़ता है। एक अंदाजे के मुताबिक मिट्टी से धान द्वारा ली गई 25 प्रतिशत नाइट्रोजन व फॉस्फोरस, 50 प्रतिशत गंधक व 75 प्रतिशत पोटाश फसल अवशेषों मे ही रह जाती है। देखा गया है कि 10 क्विंटल अवशेषों को जलाने से 400 किलो जैविक कार्बन के अलावा 5.5 किलो नाइट्रोजन, 2.3 किलो फॉस्फोरस, 25 किलो पोटाशियम व 1.2 किलो गंधक का नुकसान होता है। ऐसे तत्व यदि नष्ट हो जाते हैं तो जमीन की उपजाऊ शक्ति को बहुत बड़ा नुकसान झेलना पड़ता है। ऐसा देखा गया है कि यदि हम पराली को जमीन में ही रहने देते हैं तो जमीन की उत्पादकता तो बढ़ती ही है साथ ही मिट्टी की सेहत पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है।

धान की पराली को आग लगाने से 70 प्रतिशत कार्बन डाईआक्साईड, 7 प्रतिशत कार्बन मोनोऑक्साईड, 0.66 मीथेन, व 2.09 नाईट्रक आक्साइड आदि कई तरह की गैस निकलती है जो कि वातावरण में कई तरह के बदलाव लाने का कारण बनती है। पराली को जलाने से हानिकारक धुआँ निकलता है जिससे कई तरह की गैसें निकलती है जिससे वातावरण तो प्रदूषित होता ही है साथ-साथ मवेशी एवं मनुष्य के स्वास्थ्य पर भी दुष्प्रभाव पड़ता है। पराली को जलाने से जो गरमी पैदा होती है उससे मिट्टी के लाभदायक तत्व नष्ट हो जाते हैं जिससे धरती की सेहत पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। पराली को आग लगाने के कारण दूर-दूर तक धुआँ फैल जाता है, जिसके कारण कई सड़क दुर्घटनाएँ हुई हैं जिससे कई निर्दोष लोगों की असमय मृत्यु हो रही हैं। इस धुँएं के कारण ना सिर्फ अस्थमा रोगियों को असहनीय कष्ट का सामना करना पड़ता है बल्कि आम जनों को भी इससे साँस की तकलीफ होती है। धुँए के कारण किसानों के मित्र कीड़े एवं पक्षी विलुप्त हो गए हैं जो कि खेती-किसानी में मददगार होते हैं तथा पर्यावरण संतुलन बनाए रखते हैं। कृषि वैज्ञानिकों ने पराली खेत में ही संभाल करने के लिए विभिन्न प्रकार की मशीनों का ट्रायल करके पराली को खेतों में उपयोग करने की सिफारिश की है। इन मशीनों को खरीदने के लिए भारत सरकार व पंजाब सरकार की तरफ से भी किसानों को अनुदान (सब्सिडी) दिया जा रहा है।

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, **एस.एम.एस., उद्यान, कृषि विज्ञान केन्द्र, बाराबंकी

(क) हैप्पी सीडर के साथ बिना जोते गेहूँ की बुआई

धान की कटाई के बाद पराली को बिना खेतों से निकाले, गेहूँ की बुआई हैप्पी सीडर मशीन द्वारा की जा सकती है। इस मशीन से धान की पराली को बिना जलाए ही गेहूँ की बुआई हो जाती है। इस मशीन में फलेल किस्म के ब्लेड लगे होते हैं जो कि ड्रिल के बुआई करने वाले फाले के सामने आने वाले फसलों के अवशेषों को काटता है। और पीछे को धकेल देता है, जिस से मशीन के फालों में अवशेष नहीं फंसते हैं और बीज सही तरीके से बो दिया जाता है। हैप्पी सीडर द्वारा की गई गेहूँ की बुवाई का यह भी फायदा है कि इससे फसल में खरपतवार भी 50-70 प्रतिशत कम उगता है, बुवाई से पहले खेत में नमी रखने के लिए सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती जिससे पानी की बचत होती है,

क्योंकि धान की फसल कटने के बाद खेत की नमी में ही गेहूँ की बुवाई हो जाती है। पराली के जमीन में ही गलने से जमीन के पौष्टिक तत्वों में बढ़ोत्तरी होती है। हैप्पी सीडर मशीन 45-50 हार्स पावर वाले ट्रैक्टर से चलती है और एक दिन में तकरीबन 6-8 एकड़ क्षेत्र में बुवाई कर देती है। कुछ किसान इस मशीन को किराए पर ले कर भी चला रहे हैं हैप्पी सीडर से गेहूँ की बुवाई से पहले कंबाईन से गिरी हुई पराली को खेत में एकसार विखेरना पड़ता है ताकि यह मशीन के फालों में न फंसे।

खेत में पराली को बिखेरने के लिए कंबाईन हारवैस्टर के पीछे सुपर एस.एम.एस. (स्ट्रा मैनेजमेंट सिस्टम) लगाने की सलाह दी जाती है। यह कंबाईन पीछे गिरती पराली को काट कर खेत में एकसार बिखेर देती है, जिससे हैप्पी सीडर के काम करने की क्षमता बढ़ जाती है।

शुरु में, हैप्पी सीडर से पराली में ही गेहूँ की बुआई करने के बाद ऐसा लगता ही नहीं कि गेहूँ की बिजाई हुई है जिससे किसान को एक डर सा बना रहता है। इस डर को दूर करने के लिए हैप्पी सीडर में कुछ बदलाव किए गए हैं। इस मशीन से गेहूँ की बुआई से पहले धान के फसल अवशेष में कटर रीपर (स्टबल शेवर) या स्ट्रा कटर-कम-स्प्रेडर चलाना पड़ता है जिससे पराली खेत में एकसार फैल जाती है। हैप्पी सीडर में हर दो फालों के बीच दबाव बनाने के लिए पहिए लगाए गए हैं। यह पहिए दोनों फालों के बीच फेंके गए कुतरे पराली को दबाते हैं जिससे पराली जमीन में द जाती है व मल्च या पलाव का काम करता है। इससे फालों वाली जगह खाली रह जाती है व गेहूँ की बुआई एक समान होती है।

हैप्पी सीडर से गेहूँ की बुआई अच्छी तरह से हो इसके लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना जरुरी हैः-

- खेत में नमी की मात्रा आम तरीके से बुआई की जाने वाली गेहूँ के मुकाबले ज्यादा होनी चाहिए।
- धान की बुआई से पहले खेत समतल होना चाहिए।
- पानी के सही उपयोग के लिए धान लगाने से पहले ही कम से कम चार क्यारे प्रति एकड़ के हिसाब से बनाने चाहिए।
- दीमक के हमले को रोकने के लिए बीज का उपचार बताए गए तरीके से करना चाहिए।
- यूरिया खाद को पहला व दूसरा पानी लगाने से पहले करना चाहिए।
- गेहूँ में चूहों की रोकथाम के लिए दवा डालनी चाहिए।

(पृष्ठ 18 का शेष)

उ0 प्र0 में शून्य पुवाल/पराली बर्निंग हेतु प्रसार की रणनीतियां

आर0के0 सिंह* एवं ए0 पी0 राव**

आधुनिक कृषि में प्रमुखता से व्याप्त परम्परागत तौर तरीकों में नवीनतम तकनीकियों का समावेश करके भारतीय कृषि के अस्तित्व का बदलाव हम सभी लोग महसूस कर रहे हैं जिसमें संसाधन संरक्षण तकनीकियाँ, पर्यावरण संरक्षण, फसल अवशेष प्रबन्धन, जैविक एंव प्राकृतिक खेती को बृहद स्तर पर प्रोत्साहित किया जा सकता है। देश के कृषि योग्य क्षेत्र जैसे में धान–गेहूँ फसल प्रणाली प्रमुखता से अपनायी जाती है, जिसमें पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश सहित अन्य राज्यों को मिलाकर लगभग 11.00 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल शामिल है। इस प्रणाली में दोनो फसलों का कटाई कार्य कम्बाईन हार्वेस्टर से किया जाता है, जिसमें प्रति फसल लगभग 5.5 से 6.0 टन प्रति हेक्टेयर फसल अवशेष प्राप्त होता है। मृदा उर्वरता बढाने के लिये इसे एक सुअवसर एवं पोषक तत्वों से भरपूर कार्बनिक पदार्थ के रुप में देखा जाना चाहिए। परीक्षण में प्राप्त आँकडों के अनुसार एक टन पुवाल के खेत में इन सीटू उपयोग करने से नाईट्रोजन 5.5 किग्रा0 फास्फोरस 2.5 किग्रा, पोटास 23.0 किग्रा0, सल्फर 2.0 किग्रा0, जीवांश कार्बन 400 किग्रा0 सहित अन्य सूक्ष्म तत्व भी भूमि को मिलते हैं। धान की कटाई एंव गेहूँ की बुआई के बीच समय अन्तराल कम हाने के कारण किसान पुवाल को जलाना शुरु कर देते हैं, जिससे खेतों में मौजूद सूक्ष्म पोषक तत्व सहित मृदा के भौतिक, रसायनिक एंव नैतिक क्रियाओं पर दुष्प्रभाव के साथ वातावरण भी प्रदूषित होता है।

फसल अवशेष जलाने से बढ़ते प्रदूषण एंव नुकसान को रोकने तथा इसे उपयोगी एंव लाभदायक बनाकर कम लागत में अधिक उत्पादन व आय पाने के लिए अन्य विकल्पों के अलावा प्रसार ही एक मात्र सशक्त माध्यम है जिससे किसान सहित समाज के सभी वर्गो में तकनीकी हस्तान्तरण के माध्यम से लाभ एंव हानियों के बारे में जनचेतना, संवेदना तथा जागरूकता बढ़ाकर पुवाल जलाने की कुप्रथा को शून्य किया जा सकता है। नवीनतम तकनीकियों कों प्रसार के क्रियाकलापों के माध्यमों से किसानों को तेजी से अमल में लाना अति आवश्यक है, जिससे रबी उत्पादन के अन्तर्गत मिशन मोड में इन सीटू फसल अवशेष प्रबन्धन को बढ़ावा देकर शून्य पुवाल बर्निंग का लक्ष्य प्राप्त किया जा सके।

प्रसार से सम्बन्धित रणनीतियाँ

1.जन जागरूकता कार्यक्रमः–

- किसान, ग्रामीण युवाओं, बच्चों के माध्यम से प्रभात फेरी निकालकर जनमानस से हानि–लाभ के बारे में सन्देश पहुचाकर समझाने का प्रयास करना।
- ग्राम पंचायत, विकास खण्ड एंव जिला स्तर पर जन जागरूकता कैम्प आयोजित कर किसानों की जिज्ञासा को वैज्ञानिक कारणों के साथ चर्चा करते हुए फसल अवशेष उपयोग करने हेतु प्रेरित करना।
- नुक्कड, नाटक, संगीत/लोकगीत के माध्यम से जन समूह को एकत्रित कर जागरूक करना।
- कृषक समूह/महिला मण्डल/महिला समूह में जागरूकता कार्यक्रम आयोजित कर फसल अवशेष प्रबन्धन करने हेतु बढ़चढ़ कर भाग लेने हेतु प्रेरित करना।
- स्कूल/कालेज छात्रों को पेन्टिंग, वाद–विवाद प्रतियोगिता, निबन्ध लेखन, स्लोगन प्रतियोगिता आदि के माध्यम से जागरूक करते हुए उन्हे प्रशस्ति पत्र एंव स्मृति चिन्ह प्रदान कर सम्मानित करते हुए घर–घर तक सन्देश पहुँचाकर लक्ष्य को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

2. प्रशिक्षण कार्यक्रमः–

- प्रशिक्षण प्रसार का एक ऐसा सशक्त माध्यम है कि सभी प्रतिभागियों को कला–कौशल की क्रियात्मक रुप में व्यवहारिक शिक्षा अनुभवों के साथ दी जाती है जिससे प्रतिभागी पूर्ण रूप से तकनीकी के प्रति दक्षता एंव निपुणता हासिल कर अन्य लोगो को भी लाभान्वित कर सके।
- प्रगतिशील कृषक एंव कृषक महिलाओं हेतु आन कैम्पस–आफ कैम्पस प्रशिक्षण आयोजित करके भी अभियान की सफलता हासिल की जा सकती है।
- आवासीय प्रशिक्षण आयोजित करके प्रतिभगियों को दक्ष बनाते हुए शून्य पुवाल बर्निंग को बढ़ावा देकर लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

*वरिष्ठ वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान) कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटवा, आजमगढ़–1 एवं **नदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

- फसल अवशेष प्रबन्धन में प्रयुक्त आधुनिक कृषि यन्त्र प्रचालन के समय खेत के पास ही प्रशिक्षण (हैंण्स आन ट्रेनिंग) आयोजित व्यवहारिकता को देखते हुए त्वरित गति से अपनाने हेतु प्रेरित होगें।
- ट्रैक्टर चालकों/मेकेनिकों का आन कैम्पस प्रशिक्षण के माध्यम से दक्ष युवा चालकों को तैयार करने से फसल अवशेष प्रबन्धन में काफी तेजी लाने के साथ ही कम समय में अधिक क्षेत्रफल में तकनीकी को पहुँचाया जा सकता है।

3. प्रक्षेत्र प्रदर्शन का आयोजनः–

- प्रक्षेत्र प्रदर्शन प्रसार का एक जीवन्त एंव जनमानस में सभी प्रकार के संशय को दूर करते हुए तकनीकी के प्रति विश्वास बहाली का एक प्रमुख माध्यम है जिसे क्षेत्र के सभी किसान तकनीकी को सहज तरीके से अंगीकृत कर सकें।
- किसानों की सहभागिता से उनके ही प्रक्षेत्र पर हैप्पी सीडर, सुपर सीडर, मल्चर, जीरो टिल ड्रिल, रिवर्सिबल एम0बी0 प्लाऊ, स्ट्रा कटर कम स्प्रेडर, चापर, रोटरी स्लेशर आदि आधुनिक यन्त्रों का प्रदर्शन आयोजित कर कम लागत में अवशेष प्रबन्धन करते हुए अधिक उत्पादन एंव लाभ को दिखाते हुए तकनीकी के विस्तार हेतु बढ़ावा दिया जाता है।
- कम्बाईन हार्वेस्टर में एस0एम0एस0 का महत्व एंव हैप्पी सीडर एंव अन्य यन्त्रों से पुवाल प्रबन्धन प्रदर्शन कराकर समान रूप से बिखरे हुए पुवाल पर प्रचालन एंव कार्यदक्षता को दिखाकर अंगीकृत करने हेतु प्रेरित किया जा सकता है।

4. प्रिन्ट मीडिया के माध्यम से पुवाल प्रबन्धन को बढ़ावा देनाः–

- जनपद के समस्त समाचार पत्रों में प्रकाशित खबर/लेख/प्रचार विज्ञापन समय–समय पर प्रकाशित कर जन–जन तक पुवाल प्रबन्धन के लाभ को त्वरित गति से पहुँचाकर पुवाल जलाने की कुप्रथा को आसानी से रोका जा सकता है।
- पत्रिकाओं/शोध पत्र में लेख प्रकाशित करके पुवाल जलाने के नुकसान एंव उपयोग से मिलने वाले लाभ के आकड़े प्रस्तुत करके लागतःलाभ के बारे में सभी पाठकों को विस्तार से समझा कर जलाने से होने वाले दुश्प्रभाव को रोका जा सकता है।
- तकनीकी विस्तार बुलेटिन प्रकाशित करके किसान मेला, गोष्ठी, प्रदर्शनी आदि में वितरित कर तकनीकी के प्रति विश्वास पैदा करके लोगों के बीच जागरूकता लायी जा सकती है।
- त्रैमासिक/छमाही प्रकाशित होने वाले न्यूजलेटर में शून्य बर्निंग के लाभ सम्बन्धी आकड़े प्रकाशित कर सभी शिक्षित वर्गो को जागरूक एंव तकनीकी प्रचार प्रसार को बढ़ावा दिया जा सकता है।
- लीफलेट, फोल्डर, पोस्टर, स्टीकर, बैनर आदि माध्यमों से शून्य बर्निंग को आसानी से बढावा दिया जा सकता है।

5. होर्डिंग एंव वाल रायटिंग करानाः–

- सार्वजनिक स्थाानों पर संवेदना प्रकट करने वाले स्लोगन लिखवाकर पुवाल प्रबन्धन हेतु उत्साहित किया जाना।
- प्रमुख सार्वजनिक स्थानों जहाँ बहुतायत लोग गुजरते हैं वहाँ दीवाल पर पुवाल जलाने के दुष्प्रभाव का चित्रण दिखाकर जागरूकता लायी जा सकती है।
- मुख्य मार्गो एंव प्रमुख सार्वजनिक स्थलों पर पुवाल प्रबन्धन विषय पर बड़ी बड़ी होडिंग लगाकर फसल अवशेष प्रबन्धन हेतु जन चेतना बढ़ाकर शून्य बर्निंग लाई जा सकती है।

6. टी0वी0 कवरेज, रेडियोवार्ता, दूरदर्शन पर पैनल वार्ता डी.डी. किसान एंव अन्य चैनलों के माध्यम से त्वरित गति से जनमानस के बीच जागरूकता लाकर फसल अवशेष प्रबन्धन में तेजी लायी जा सकती है।

7. कृषक दल का जनपद स्तरीय, अन्तर्जनपदीय एंव प्रदेश स्तर पर शैक्षिक/तकनीकी पुवाल प्रबन्धन तकनीकी भ्रमण के माध्यम से अंगीकृत करने हेतु प्रोत्साहित कराते हुए अन्य स्थानीय कृषकों को भी तकनीकी अंगीकृत करने हेतु जागरूक कर शून्य बर्निंग को बढ़ावा देना।

8. प्रक्षेत्र दिवस एंव कटाई दिवस का आयोजन कर अन्य किसानों एंव अन्य वर्गो को तकनीकी विशेषता एंव पुवाल प्रबन्धन के लाभ को बताकर आगामी फसल में कम खर्च में मृदा उर्वरता बढ़ाते हुए अपनी उपज की वृद्वि कर अधिक लाभ प्राप्त करने हेतु जागरुक करना।

9. फसल अवशेष प्रबन्धन विषय पर बेवीनार, सेमीनार, तकनीकी वार्ता का आयोजन करवाकर प्रबुद्ध वर्ग,

किसान, छात्र, उद्यमी, कृषक महिला समूह आदि को जागरूक कर शून्य बर्निंग में तेजी से लायी जा सकती है।

10. सोशल मीडिया द्वारा जागरूकता बढ़ानाः–

- व्हाट्स एप ग्रुप के माध्यम से मैसेज भेज कर सदस्यों को तकनीकी के फायदों को बताकर प्रचार–प्रसार में तेजी लाई जा सकती है।
- एम. किसान पोर्टल एवं अन्य पोर्टल के माध्यम से हजारों किसानो के व्यक्तिगत मोबाइल फोन पर पुवाल प्रबन्धन की आधुनिक जानकारी भेज कर शून्य बर्निंग को बढ़ावा दिया जा सकता है।
- फेसबुक/यूट्ब के माध्यम से फसल अवशेष प्रबन्धन तकनीकी के प्रचार–प्रसार को बढ़ाकर सभी में त्वरित जागरूकता लायी जा सकती है।

11. समाज सेवी संस्थाओं, एन.जी.ओ., प्रसार कार्यकर्ताओं को शुन्य पुवाल बर्निंग के फायदे समझाकर क्षेत्र विशेष में तकनीक अंगीकृत करने हेतु प्रेरित करना।

12. जनप्रतिनिधियों द्वारा अपने निर्वाचन क्षेत्र की आम जनता एंव कृषकों को इन सीटू पुवाल प्रबन्धन के फायदे को बताते हुए कम खर्च में अधिक आय प्राप्त करने हेतु प्रोत्साहित करें।

13. सरकार द्वारा फसल अवशेष प्रबन्धन दिवस घोषित करवाकर जनमानस के बीच जागरूकता संदेश पहुँचाना।

- प्रसार के उपरोक्त सशक्त माध्यमों को अपनाकर उत्तर प्रदेश जैसे बडे राज्य में शुन्य पुवाल बर्निंग का लक्ष्य आसानी से प्राप्त करने के साथ वातावरण सहित जल, जंगल, जमीन, जानवर, जलवायु एवं जनजीवन को सामान्य बनाने में काफी सहायक साबित होगा।

(पृष्ठ 15 का शेष)

(ख) चोपर/मल्चर से पुआल को कुतरा करके खेत में मिलाना

कृषि वैज्ञानिकों ने धान की पराली को खेतों से ही मिलाने की तकनीक विकसित की है जिस में धान की पराली की कुतरन व खिलारन के लिए पराली वाला चोपर/मलचर का उपयोग किया जा सकता है। इस मशीन में 40-50 हार्स पावर के ट्रैक्टर की जरुरत पड़ती है। यह मशीन एक दिन में 6-8 एकड़ पराली को कुतर सकती है। इसके बाद काटी गई पराली को दो तरीकों से खेत में ही मिलाया जा सकता है।

(i) पानी लगा कर पुआल को मिट्टी में मिलाना

चोपर चलाने के बाद काटी हुई पराली वाले खेत को हल्का पानी लगा के रोटरी पैडलर (रोटावेटर) की मदद से इस पराली को बड़ी आसानी से जमीन में मिलाया जा सकता है। धान की पराली की यह विशेषता है कि यह मिट्टी में मिलने पर बहुत जल्दी गल जाती है। जमीन की मिट्टी की किस्म के आधार पर व खेत की नमी की जरुरत के अनुसार इस प्रक्रिया में दो से तीन हफ्तों का समय लग जाता है। इस तकनीक को अपनाने के लिए धान के खेत का पानी कटाई से 15 दिन पहले बंद कर देना चाहिए ताकि कटाई के समय खेत खुष्क हो और यही पानी चोपर के साथ पराली को कुतरा करने के बाद इसको खेत में ही मिलाने के काम लाया जा सके। नमी आने से खेत में गेहूँ की बुआई आम ड्रिल या जीरो-टिल-ड्रिल से की जा सकती है।

(ii) एम. बी. प्लाऊ (उल्टा हल) के साथ मिट्टी में मिलाना :

कुतरी हुई पराली को उल्टे हल की मदद से नमी वाले खेत में मिलाया जा सकता है। यह हल दो किस्म के होते हैः फिक्स व रिवर्सीबल। फिक्स किस्म का हल मिट्टी को एक तरफ पलटता है जबकि रिवर्सीबल किस्म के हल में अगले चक्कर में बदल लिया जाता है व उसे खाली चलाते हुए मिट्टी को एक तरफ फेंकते हैं। इससे सारे खेत का स्तर खराब नहीं होता है। यह हल तकरीबन 15-30 सेंटीमीटर गहरे तक मिट्टी निकाल कर पराली को जमीन में दबा देते हैं। इसके बाद रोटावेटर या डिस्क हैरो के साथ जोत के खेतों को आलू, सब्जियां व अन्य फसलों की बुआई के लिए तैयार कर लिया जाता है।

देसी गौवंश आधारित प्राकृतिक खेती

प्रकाश सिंह* एवं नरेन्द्र रघुबंशी**

भारतीय परम्परा और संस्कृति में गाय और कृषि परस्पर एक–दूसरे के पूरक हैं। गौ आधारित प्राकृतिक खेती रसायन एवं पेस्टिसाइड मुक्त कृषि वह पद्धति है जिसमें परंपरागत तरीके से प्रकृति के नियमों का अनुसरण करते हुए देसी गाय आधारित खेती के सिद्धांतों को अपनाकर खेती की जाती है। वर्तमान खेती की पद्धति में अंधाधुंध रासायनिक उर्वरको, कीटनाशको, हाइब्रिड बीजो के प्रयोग स्वरुप अधिकाधिक भूजल दोहन से भूमि की उर्वरा शक्ति, उत्पादन, भूजल स्तर और मानव स्वास्थ में निरन्तर गिरावट आयी है। किसान बढती लागत एवं बाजार पर निर्भरता के कारण खेती छोड़ रहे हैं। ऐसी दशा में प्राकृतिक खेती को एक महत्वपूर्ण विकल्प के रूप में देखा जा रहा है। प्राकृतिक खेती में कीटनाशक, रासायनिक खाद, हाइब्रिड बीज आदि का प्रयोग नहीं होता है यह खेती पूरी तरह प्राकृतिक संसाधनों पर आश्रित है। इस प्रकार की खेती की पद्धति में किसान के पास कम से कम एक देसी गाय होनी आवश्यक है ताकि जरुरत के मुताबित गोबर एवं गौ मूत्र संग्रह किया जा सके। घर के आस –पास उपलब्धवनस्पतियों एवं अन्य सामग्रियों द्वारा गोबर की खाद, दवायें एवं संजीवक बनाकर फसलों में इस्तेमाल कर सकते हैं।

प्राकृतिक खेती का विकास भारत के अतिरिक्त जापान में भी मसानेबू फूकोका द्वारा विकसित किया गया था। फूकोका ने अपनी पुस्तक "द वन स्ट्रा रिवोल्यूशन में प्राकृतिक खेती की विधियों का उल्लेख किया गया है। इस कृषि को कुछ भी बाहरी उत्पादों का इस्तेमाल न करने वाली कृषि भी कहते हैं। इसमें लाभदायक सूक्ष्म जीवों को अधिक महत्व दिया जाता है।

महत्वपूर्ण बाते –

- प्राकृतिक कृषि में भारतीय नस्ल का गौवंश ही प्रयोग करे।
- प्राकृतिक कृषि में देसी या उन्नत बीजो का ही प्रयोग करे।
- पौधा व फसल की पंक्ति की दिशा उत्तर–दक्षिण रखिये।
- फसल बुवाई के बाद खेत में अच्छादन करे।
- प्राकृतिक कृषि में देसी केचुओ का ही उपयोग करें

प्राकृतिक खेती का आधार

प्राकृतिक व्यवस्था– प्रकृति में सभी जीव एवं वनस्पतियों के भोजन की एक स्वावलंबी व्यवस्था है जिसका प्रमाण है, बिना किसी मानवीय सहायता (खाद, कीट नाशक आदि) के जंगलो में खड़े हरे–भरे पेड़ व उनके साथ रहनेवाले करोडो जीव–जन्तु पौधो के पोषण के लिए आवश्यक सभी 16 तत्व प्रकृति में उपलब्ध हैं उन्हें भोजन के रूप में बढ़ने का कार्य मिट्टी में पाये जाने वाले करोड़ों सूक्ष्म जीवाणु करते हैं। इस पद्धति में पौधो को भोजन न देकर भोजन बनाने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं की उपलब्धता पर जोड़ दिया जाता हैं (जीवामत, घन जीवामृत द्वारा) पौधों के पोषण की प्रकृति में चक्रीय व्यवस्था हैं। पौधे अपने पोषण के लिए मिट्टी से सभी तत्व लेते हैं। फसल पकने के बाद अपशिष्ट पदार्थ के रूप में मिट्टी में मिलकर, अपघटित होकर मिट्टी की उर्वरा शक्ति (ह्यूमस) के रूप में लौटता है।

देशी गाय–देसी गाय के गोबर में 300–500 करोड़ उपरोक्त सूक्ष्म जीवाणु होते हैं। गाय के गोबर में गुड़ व अन्य पदार्थ डालकर किण्वन से सूक्ष्म जीवाणु कई गुणा बढ़ाकर तैयार किया जाता हैं। जीवामृत एवं धन जीवामृत जब खेत में पड़ता है तो अरबो सूक्ष्म जीवाणु भूमि में उपलब्ध तत्वों से पौधो का भोजन निर्माण करते हैं।

देशी केचुओ का महत्त्व–केंचुआ मिट्टी, बालू पत्थर खाता हुआ 15 फीट की गहराई तक भूमि के नीचे जाता हैं नीचे से पोषक तत्वों को ऊपर लाता हैं तथा पौधो की जड़ के आस पास अपनी विस्टा के रूप में छोड़ता हैं। जिसमे खनिज तत्वों का भंडार होता हैं। केचुआ भूमि में दिन रात करोडों छिद्र करता हैं क्योंकि

*विषय वस्तु विशेषज्ञ, **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, वाराणसी, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

केचुआ एक छिद्र का दुबारा उपयोग नही करता परिणाम स्वरुप वह भूमि की जुताई कर मुलायम बनाता है तथा इन्ही छिद्रों से पूरा वर्षा जल भूमि में संग्रहित होता है।

प्राकृतिक खेती के प्रयोग

बीजामृत– बीजो को बुआई करने से पहले बीजो को संसोधन करना बहुत जरूरी हैं। इसके लिए बीजामृत बहुत ही उपयोगी है। देशी गाय का गोबर–5 कि.ग्रा., देशी गाय का मूत्र–5 ली., चूना या कली–250 ग्रा., पानी–20 ली. और खेत की मिट्टी मुट्ठी भर, इन सभी पदार्थो को पानी में घोलकर 24 घंटे तक रखिये दिन में दो बार लकड़ी से इसे हिलाना हैं। इसके बाद बीजो के ऊपर बीजामृत डालकर उन्हें शुद्ध करना है। इसके बाद छाया में सुखाकर फिर बुआई करनी है। इससे जड़े तेजी से बढती हैं और बीमारियों से बचे रहते हैं और अच्छी प्रकार से पलते–बढते हैं।

जीवामृत–एक एकड़ जमीन के लिए 10 कि.ग्रा . गोबर के साथ गौमूत्र, गुड़ और दो–दले बीजों का आटा या बेसन आदि मिलाकर प्रयोग में लाने से चमत्कारी परिणाम निकलते हैं। देशी गाय का गोबर 10 कि.ग्रा., देशी गाय का मूत्र 8–10 ली., गुड़ 1–2 कि.ग्रा., बेसन 1–2 कि.ग्रा., पानी 180 ली. और पेड़ के नीचे की मिट्टी 1–2 कि.ग्रा.। उपरोक्त सामग्रियों को प्लास्टिक के एक ड्रम में डालकर लकड़ी के डंडे से घोलते हैं और इस घोल को दो से तीन दिन तक सड़ने के लिए छाया में रख देते हैं। प्रतिदिन दो बार सुबह और शाम घडी की सूई की दिशा में लकड़ी के डंडे से दो मिनट तक इसे घोलते हैं और जीवामृत को बोरे से ढक देना हैं। इसके सरने से अमोनिया, कार्बन डाई ऑक्साइड, मीथेन जैसी हानिकारक गैसो का निर्माण होता है। गर्मी के महीने में जीवामृत 7 दिन तक और सर्दी में 8–15 दिन तक उपयोग कर सकते हैं। जीवामृत को महीने में दो बार या एक बार उपलब्धता के अनुसार, 200 ली. प्रति एकड़ के हिसाब से सिचाई के पानी के साथ देना है।

घनजीवामृत– देशी गाय का गोबर 100 कि.ग्रा., गुड़ 1 कि.ग्रा., दलहन का आटा 2 कि.ग्रा., खेत की मिट्टी मुट्ठीभर और थोड़ा सा देशी गाय का मूत्र। उपरोक्त सभी पदार्थों को अच्छी तरह से मिलाकर गूंथ ले ताकि उसका हलवा, लड्डू जैसा गाढ़ा बन जाए। उसे 2 दिन तक बोरे से ढककर रखे और थोडा पानी छिड़क दे। इस लड्डू को कपास, मिर्च, टमाटर आदि के बीज के साथ भूमि पर रख दे। उसके ऊपर सूखी घास डालें और उसके ऊपर डिपर से पानी डालें। गीले घंजीवामृत को छाये में फैलाकर सुखा लें। सूखने के बाद इसको लकड़ी से पीटकर बारीक़ करे व बोरों में भरकर छाया में भण्डारण करे। फसल की बुवाई के समय प्रति एकड़ 100 कि.ग्रा. छाना हुआ गोबर खाद और 100 कि.ग्रा. घंजीवामृत मिलाकर बीज बोयें। कृषि विज्ञान केन्द्रों पर इसके प्रयोग से अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं।

अच्छादन– देशी केचुओं को कार्य करने के लिए आवश्यक सूक्ष्म पर्यावरण एवं भूमि की नमी को सुरक्षित करने हेतु भूमि को ढका जाता हैं। सूक्ष्म पर्यावरण का आशय है पौधों के बीच हवा का तापमान 25 डिग्री से. से 32 डिग्री से.नमी 65–72 व भूमि सतह पर अधेरा। जब हम अच्छादन करते है तो उपरोक्त परिस्थिति बनती हैं सूक्ष्म जीवाणु व केचुये अपना कार्य करते हैं बाद में अच्छादन अपघटित होकर उर्वरा शक्ति (ह्यूमस) का निर्माण करता हैं, साथ ही अच्छादन हवा से पानी सोखकर भूमि को उपलब्ध कराता है।

बेड नाली व्यवस्था–जड़े सीधे पानी नहीं लेती व मिट्टी कणों के बीच वाष्प (50 प्रतिशत हवा + 50 प्रतिशत वाष्प) को लेती हैं ऊँचे बेड़ो पर बुवाई करके नाली में पानी देकर वाष्प के रूप में उपलब्ध करने से पानी बहुत कम लगता हैं। नालियों में अच्छादन कर देने से वाष्पन भी रुक जाता हैं पानी की बचत होती हैं।

सहयोगी फसलें– प्राकृतिक कृषि में मुख्य फसल के साथ सहयोगी फसलों की खेती भी एक साथ की जाती है जिससे मुख्य फसल को नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश आदि मिलता रहे। सहयोगी फसलो की जड़ो के पास नाइट्रोजन स्थिरक जीवाणु जैसे राइजोबियम, असोस्पिरिलम, अजोटोबक्टर आदि की मदद से पौधो का विकास होता है। प्राकृतिक कृषि

(शेष पृष्ठ 25 पर)

गेहूँ-धान फसल चक्र फसल अवशेष प्रबंधन

के.एम. सिंह* एवं आर.आर. सिंह**

फसल कटाई–छटाई या फसल के अन्य कार्य करने के उपरान्त शेष बचे वानस्पतिक भाग जो जमीन पर छूट जाते हैं, फसल अवशेष कहलाते हैं।

फसल अवशेष के बाहर निकालने से खेत की उर्वरा शक्ति में ह्रास होता है जिसके कारण उत्पादकता में कमी आ जाती है।

समान्यतः धान के पुआल में कुल ग्रहण की गई पोषण का 35 प्रतिशत नत्रजन, 10 प्रतिशत फास्फोरस, 80 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है।

फसल अवशेष बंधन के तरीके: फसल अवशेष को निम्न तरीकों के द्वारा प्रबंधन किया जा सकता है।

1. अवशेष को जलाना
2. अवशेष के बण्डल बनाना एवं खेत से बाहर निकालना
3. फसल अवशेष को जमीन पर फैलाना (मल्च) या छोड़ देना
4. फसल अवशेष को मिट्टी में मिलाना

भूमि में फसल अवशेष मिलाने के बाद सूक्ष्म जैवीय पदार्थ की मात्रा 2 से 5 गुना 10 दिन में बढ़ जाती है तथा 30 दिन पर अधिकतम हो जाती है।

भूमि में जहां फसल अवशेष को मिलाया जाता है वहां लगभग 45 प्रतिशत सूक्ष्म जैवीय पदार्थ तथा 60 प्रतिशत नत्रजन की मात्रा खेत से निकाले गये फसल अवशेष से अधिक मिलता है।

फसल अवशेष प्रबंधन के कुछ विशेष लाभ :

1. फसल अवशेष को क्षारीय भूमि के सुधार में प्रयोग किया जाता है।
2. जैवीय नत्रजन में स्थिरीकरण अधिक होता है।
3. खरपतवार प्रबंधन फसल अवशेष के प्रयोग से किया जाता है।

धान–फसल अवशेष के प्रयोग से कैल्शियम तथा कार्बन की प्रेसीपिरेशन को कम करता है। सोडियम की मात्रा जल में घोलकर खेत से बाहर निकलने को बढ़ाता है तथा मृदा के पी.एच. एवं ई.सी. मान में कमी करता है।

फसल अवशेष को जलाना: सामान्यतः किसान अपनी फसल को कम्बाइन द्वारा कटाई करने के बाद एवं आगामी फसल से बुआई से पूर्व खेत को तैयार करने हेतु फसल अवशेषों को जला देते हैं। विशेषकर धान व गेहूँ के अवशेषों को जलाते हैं। फसल अवशेष को जलाने से पोषक तत्वों को पुनः स्थिरीकरण (Recycle) नही हो पाता है एवं वायु प्रदुषण के साथ भूमि में लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु की संख्या में कमी हो जाती है जिससे भूमि की उर्वरता में कमी आती है एवं उत्पादकता भी कम हो जाती है।

फसल अवशेष जलाने के लाभ:

1. फसल अवशेष जलाने से आगामी फसल की बुआई समय से की जा यकती है।
2. फसल अवशेष जलाने से भूमि पर शीघ्र ही फसल अवशेष खत्म हो जाते हैं।
3. फसल अवशेष जलाने से भूमि जनित कीट–रोग एवं अन्य व्याधियाँ खत्म हो जाती हैं।
4. खेत बुआई हेतु तैयार करने में कम खर्च आता है।
5. फसल अवशेष के जलाने से पूर्व में जमे अथवा जमने वाले खरपतवारों की संख्या में कमी आ जाती है।

फसल अवशेष को जलाने से हानियाँ:

1. फसल अवशेष के जलाने से वायु प्रदूषण बहुत अधिक मात्रा में होता है जिसके कारण दमा के रोगियों को तकलीफ के साथ अन्य व्यक्तियों को भी सांस लेने में समस्या आती है।
2. फसल अवशेष को जलाने से काफी मात्रा में धुँआ

सारिणी–1 भारत वर्ष में फसल अवशेष की उपलब्धता एवं पोषक तत्व :

फसल	अवशेष	पोषक तत्व (10^3) टन			
	(मि.टन)	नत्रजन (N)	फास्फोरस (P205)	पोटाश (K20)	नत्रजन+ फास्फोरस+ पोटाश
धान	225.9	1220	542	2417	4179
गेहूँ	98.9	534	237	1058	1824
बाजरा	12.0	62	28	124	214
मक्का	11.5	59	26	116	201
ज्वार	10.9	65	29	128	222
जौ	2.6	14	6	27	47
अन्य	4.1	22	10	43	75

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, नानपारा, बहराइच, **प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

उत्पन्न होता है जिसके कारण कभी–कभी सड़क दुर्घटना हो जाती है एवं बेकसूर व्यक्तियों की असमय मृत्यु हो जाती है।

3. फसल अवशेष के जलाने से जमीन में पाये जाने वाले लाभकारी कीट एवं सूक्ष्म जीवाणु जलकर खत्म हो जाते हैं।
4. फसल अवशेष को जलाने से मानव के साथ पशु–पशियों को भी नुकसान होता है।

फसल अवशेष का बण्डल (Balring) बनाना एवं खेत से बाहर निकालना :

किसी धान्य फसल की कटाई के उपरान्त आगामी फसल की बुआई से पूर्व खेत में उपलब्ध फसल अवशेष को बण्डल (Balring) बनाकर औद्योगिक उपयोग या पशु आहार उपयोग के लिए इकट्ठा कर लेते हैं। यह कार्य मशीनों द्वारा किया जाता है। कभी–कभी बण्डल बनाने वाली मशीनों की उपलब्धता न होने पर फसल अवशेष को मानव शक्ति द्वारा इकट्ठा कर खेत से बाहर निकाल कर अन्यत्र स्थान पर रख दिया जाता है जिसके लिए अतिरिक्त स्थान की आवश्यकता होती है।

फसल अवशेष के बण्डल की उपयोगिता :

1. फसल अवशेष के बण्डल को खेत से बाहर निकालकर इकट्ठा कर लेते हैं। बाद में पशु चारा के रूप में प्रयोग किया जाता है।
2. फसल अवशेष का प्रयोग जलाने (फ्यूल) के रूप में करते हैं। विशेषकर भट्ठों, तापीय बिजली घरों में ऊष्मा उत्सर्जन हेतु करते हैं।
3. फसल अवशेष का प्रयोग भवन निर्माण विशेषकर छप्पर बनाने एवं अन्य स्थानों में किया जाता है।
4. फसल अवशेष का प्रयोग पशु बिछावन के रूप में करते हैं।
5. फसल अवशेष का प्रयोग गुणवत्ता युक्त सब्जी उत्पादन में जमीन पर बिछाकर उसके उपर लता वाली सब्जियों को उत्पादित किया जाता है।
6. फसल अवशेष का प्रयोग मल्चिंग के रूप में बागानों, खेती अथवा अन्य दूरी पर बोई जाने वाली फसलों में किया जाता है जिससे खर–पतवारों का आयतन नही होता है एवं भूमि तापमान पर नियंत्रण रखता है।
7. फसल अवशेष का प्रयोग नाडेप कम्पोस्ट बनाने अथवा अन्य प्रकार की कम्पोस्ट बनाने में भी किया जाता है।

फसल अवशेष को भूमि के उपर छोड़ने से लाभः

फसल अवशेष को भूमि के उपर छोड़ने से निम्नलखित लाभ होते हैं–

1. इसमें फसल अवशेष को बिना किसी क्रिया यानि भूमि में मिलाने का कार्य नही किया जाता है तथा फसल अवशेष को ऐसे ही जमीन के ऊपर फैलाकर छोड़ दिया जाता है, जो एक मल्च का कार्य करता है एवं भूमि में तापमान को भी नियंत्रित करता है।
2. फसल अवशेष के जमीन के ऊपर फैलाने से यह जल एवं वायु द्वारा होने वाले भूमि क्षरण को रोकता है जिससे भूमि की ऊपरी सतह की उर्वरा शक्ति का ह्रास नही होने पाता है।
3. फसल अवशेष फैलाने का कार्य बिना जुताई या संरक्षित खेती में किया जाता है जहाँ पर कम से कम 30 प्रतिशत भू–भाग फसल अवशेष द्वारा ढका जाता है।

फसल अवशेष को मिट्टी मे मिलाना :

फसल अवशेष को भूमि में विभिन्न माध्यमों से जमीन में मिलाया जाता है जो निम्न प्रकार से होता है–

1. फसल अवशेष को पूर्ण अथवा छोटे–छोटे टुकड़े चौपर के माध्यम से करके एम.बी.प्लाऊ द्वारा जमीन में मिला दिया जाता है।
2. फसल के जमीन से ऊपरी भाग को चौपर के माध्यम से जमीन में मिला दिया जाता है।
3. फसल अवशेष के जमीन में मिलाने से भूमि में कार्बनिक पदार्थ में वृद्धि के साथ–साथ मृदा में नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश एवं अन्य पोषक तत्वों की मात्रा में वृद्धि होती है।

फसल अवशेष के जमीन में मिलाने से फसल वृद्धि पर प्रभावः

फसल अवशेष को जमीन में मिलाने से निम्नलखित प्रतिकूल प्रभाव पड़ते हैं–

1. फसल अवशेष को जमीन में मिलाने से जमीन मे उपलब्ध पोषक तत्वों की उपलब्धता में कमी आती है।
2. कभी–कभी कुछ फसलों के अवशेष जमीन में मिलाने से हानिकारक रसायन उत्पन्न होते हैं जो फसल की बढ़वार पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।
3. फसल अवशेष को जमीन में मिलाने से आगामी फसल की शुरुवाती बढ़वार धीमी गति से होती है।
4. फसल अवशेष को जमीन में मिलाने से अधिक जल एवं समय की अवशेष को सड़ाने के लिए आवश्यकता पड़ती है।

फसल अवशेष का भूमि की गुणवत्ता/उर्वरता पर प्रभावः

भूमि की गुणवत्ता विशेष प्रकार की भूमि क्षमता होती है जो

(पृष्ठ 33 का शेष)

ओट्स के फायदे जो बना सकते हैं आपको स्वस्थ और सेहतमंद

कंचन* एवं एस.के. तोमर**

ओट्स सबसे ज्यादा सेहतमंद अनाजों में से एक है जो कि मॉटे अनाज जई का संवर्द्धित रूप है। ये ग्लूटन–फ्री होते हैं और इनमें जरूरी , एंटीऑक्सिडेंट्स राइबोफ्लेविन, विटामिन बी 6, प्रोटीन, मैग्नीशियम, कैल्शियम, आयरन, फास्फोरस, सेलेनियम इत्यादि हैं। इसमें उच्च मात्रा में फाइबर होता है जो आसानी से पानी में घुलनशील हो जाता है यह पेट को आसानी से भर देता है। रिसर्च बताते हैं कि ओट्स और ओटमील के खाने से आपके शरीर के सेहत को ढेरों फायदे मिलते हैं। इनमें वजन कम होना, ब्लड शुगर नियंत्रित होना और हृदय रोगों का रिस्क कम होना शामिल है।

ओट्स ना केवल स्वास्थ्यवर्धक हैं बल्कि ये स्वादिष्ट भी होते हैं। इन्हें हर रोज अपने नाश्ते में शामिल कर सकते हैं। इन्हें दलिया के तौर पर या ओट्स स्मूदी बना कर खा सकते हैं, इनसे बहुत से फायदे मिलते हैं। साथ ही ये न्यूट्रिशन का पावरहाउस है क्योंकि इनमें फाइबर, प्रोटीन, विटामिन और मिनरल भरपूर होते हैं।

ओट्स के फायदे

ओट्स में होते हैं ढेरों पोषक तत्व

- एंटीऑक्सिडेंट्स से भरपूर
- कोलेस्ट्रोल को कंट्रोल करता हैं
- डाइजेशन बेहतर होता है
- वजन कम करने में मदद
- ब्लड प्रेशर को रेगुलेट करता है
- ब्लड शुगर कंट्रोल होती है
- बेहतर नींद
- स्किन अच्छी होती है

ओट्स के फायदे को देखते हुये इन्हें आपने डाइट में शामिल करना चाहिये

ओट्स में होते हैं ढेरों पोषक तत्व

ओट्स में न्यूट्रीशन अच्छी तरह से बैलेंस होता हैं। ये पावरफुल फाइबर बीटा–ग्लूकन सहित कार्ब्स और फाइबर का एक अच्छा स्रोत हैं। रिसर्च के मुताबिक, ओट्स में निम्न न्यूट्रीएंट्स भी पाए जाते हैं–

- मैंगनीज
- फॉस्फोरस
- मैग्नीशियम
- कॉपर
- आयरन
- कैल्शियम
- पोटेशियम
- जिंक
- फोलेट
- विटामिन बी3
- विटामिन बी6
- विटामिन बी–1 (थियामिन)
- विटामिन बी 5
- फाइबर
- प्रोटीन

एंटीऑक्सिडेंट्स से भरपूर

साबुत ओट्स में एंटीऑक्सिडेंट की भरपूर मात्रा होती है जिन्हें पॉलीफेनोल्स कहा जाता है। साथ ही ओट्स में बड़ी मात्रा में फेरुलिक एसिड भी पाया जाता है। यह एक लाभकारी एंटीऑक्सीडेंट है। ये एंटीऑक्सीडेंट्स शरीर को फ्री रेडिकल्स से लड़ने में मदद करते हैं और सेल्स को डैमेज होने से बचाते हैं।

कोलेस्ट्रोल को कंट्रोल करता है

दिल से जुड़ी बीमारियां दुनिया भर में बड़े स्तर पर होने वाली मौतों का कारण हैं और इनकी एक मुख्य वजह है हाई ब्लड कोलेस्ट्रॉल। कई रिसर्च में पता चलता है कि ओट्स में बीटा–ग्लूकन फाइबर होता है जो टोटल और एलडीएल कोलेस्ट्रॉल दोनों के स्तर को कम करने में मदद करता है।

पाचन बेहतर होता है

बोवेल मूवमेंट्स को रेगुलर करने के लिए और पाचन यानि डाइजेशन को सही रखने के लिए फाइबर बेहद

*एस.एम.एस(गृह विज्ञान), **वरिष्ठ वज्ञानिक एवं अध्यक्ष, के.वी.के. बेलीपार, गोरखपुर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

जरूरी है। यह अपच, कब्ज और गैस की समस्या को भी दूर रखने में मदद कर सकता है। एक कप ओट्स में सही मात्रा में फाइबर मिल जाता है जिससे आपका डाइजेशन अच्छा रहता है और आपका शरीर सभी भोजन को पचा पाता है।

वजन कम करने में मदद

वजन बढ़ना कई समस्याओं की वजह बन सकता है इसलिए वजन को मेनटेन करना और बढ़ते वजन को रोकना बेहद जरूरी है। हालांकि वजन कम करना काफी मुश्किल काम हो सकता है लेकिन ओट्स आपकी मदद कर सकते हैं। रिसर्च बताते हैं कि ओट्स में एक कम्पाउं बी–ग्लूकॉन पाया जाता है जो भूख से लड़ने वाले हार्मोन कोलेसीस्टोकिनिन को बढ़ाकर भूख को कम करता है जिससे अधिक खाने से बच जाते हैं।

ब्लड प्रेशर को रेगुलेट करता है

अमेरिकन जर्नल ऑफ क्लिनिकल न्यूट्रीशन में पब्लिश एक स्टडी में कहा गया है कि अगर एक व्यक्ति अपने आहार में साबुत अनाज (जैसे ओट्स या होल ब्रेड) शामिल करता हैं, तो इससे हाई ब्लड प्रेशर को कम करने में मदद मिल सकती है।

ब्लड शुगर कंट्रोल होती है

टाइप 2 डायबिटीज एक आम बीमारी है, जिसमें ब्लड शुगर का लेवल बढ़ जाता है। यह आमतौर पर हार्मोन इंसुलिन के प्रति सेंसिटिविटी कम होने के कारण होता है। ओट्स खाने से ब्लड शुगर के स्तर को कम करने में मदद मिल सकती है, खासकर उन लोगों में जिनका वजन ज्यादा है या जिन्हें टाइप 2 डायबिटीज है।

बेहतर नींद

आजकल की तनाव भरी जिंदगी में नींद ना आने की समस्या बहुत से लोगों को प्रभावित कर रही है। ऐसे में ओट्स इस समस्या से निजात दिलाने में मदद कर सकते हैं। अगर आप सोचते हैं कि ओट्स का सेवन केवल नाश्ते में ही किया जा सकता है तो ऐसा नहीं है क्योंकि बेडटाइम के लिए भी यह एक अच्छा फूड ऑप्शन है। ओट्स में मेलाटोनिन और कॉम्प्लैक्स कार्बोहाइड्रेट होते हैं जो ट्रिप्टोफैन को ब्रेन तक ले जाने में मदद कर सकते हैं। इससे आपको बेहतर नींद आती है।

ओट्स खाने के नुकसान क्या है

ओट्स खाने के फायदे आप जान गये होंगे। अब ओट्स के कुछ नुकसान भी देख लेते है।

- कम पोषक तत्व वाले ओट्स अधिक मात्रा में सेवन करने से अधिक नींद, हड्डियों में दर्द, थकान, मांसपेशियो में कमजोरी होना, चिंता, नाखून नहीं बढ़ना, माइग्रेन, मोतियाबिंद जैसी गंभीर बीमारिया हो सकती है।
- ठीक से नहीं पके ओट्स को खाने से पेट सम्बंदित समस्या उत्पन्न हो जाती है। जिससे पेट में कब्ज की समस्या हो जाती है।
- ओट्स में अधिक फैटिक एसिड होता है इसका अधिक सेवन करने से स्वास्थ सम्बंधित समस्या हो सकती है।
- ओट्स बहुत किस्म की आती है। शुगर मिक्स ओट्स मधुमेह मरीजों के लिए हानिकारक होता है इसलिए शुगर मिक्स ओट्स का सेवन करने से बचे।
- बच्चों के लिए ओट्स खाने के क्या फायदे है ?
- ओट्स में उच्च फाइबर होता है। यह शिशु को 6 महीने से अधिक होने पर खिलाये क्योकि इसके पोषक तत्व से शिशु को मजबूती मिलेगी।
- ओट्स को नाश्ते के समय बच्चो को खिलाये। यह करने से बच्चे को प्रोटीन प्रचुर मात्रा में मिलेगा और भूख की अनुभूति नहीं होगी।
- बच्चो को ओट्स का सेवन करवाने से बच्चो के दिमाग का विकास तेजी से होता है।
- सही मात्रा में बच्चो को ओट्स का सेवन करवाने से यह बच्चो के इम्युनिटी सिस्टम को मजबूत करता है।
- ओट्स के पोषक तत्व संक्रमण को रोकता है इसलिए ओट्स का सेवन बच्चो को कराना चाहिए।
- छोटे बच्चों की हड्डियां बहुत नाजुक होती है उन्हे

मजबूती देने के लिए दूध में ओट्स को मिश्रण करके खिलाना चाहिए।

आजकल बहुत से स्किन केयर प्रोडक्ट्स में ओटमील को शामिल किया जाता है क्योंकि यह स्किन की क्वालिटी को बेहतर करने में मदद करता है। अगर आप चाहती हैं कि आपकी स्किन ग्लोइंग और शाइनी हो तो आप ओट्स को अपनी डाइट के साथ–साथ अपने स्किन केयर रूटीन में भी शामिल कर सकती हैं। यह एक अच्छे एक्सफोलिएंट के तौर पर काम करता है क्योंकि ओट्स का टैक्स्चर थोड़ा रफ होता है जिससे आपको डेड स्किन सेल्स को हटाने में मदद मिलती है।

ओट्स लड्डू रेसिपी

तैयारी का समय 10 मिनट का समय 9 मिनट कुल समय 16 मिनट 8 लड्डू के लिए सामग्री

- एक कप कुकिंग रोल्ड ओट्
- एक टेबल स्पून बारीक कटे हुए अखरोट
- एक टेबल स्पून बारीक कटे हुए बादाम
- 1 टेबलस्पून तिल
- 1 टीस्पून की घी
- एक टेबल स्पून कसा हुआ गुड
- 1 टीस्पून इलायची पाउडर
- 1 टेबलस्पून लो पेट दूध

विधि

- चौड़ा नॉन स्टिक पैन गर्म करें , ओट्स डालकर मध्यम आंच पर 3 मिनट के लिए सूखा भून ले और पूरी तरह ठंडा करने के लिए एक तरफ रख दें।
- उसी चौड़े नॉन स्टिक पैन में तेल डालकर, मध्यम आंच पर 2 मिनट के लिए सूखा भूलने।
- ठंडा करने के लिए एक तरफ रख दें।
- नॉन स्टिक में पैन में घी और गुड़ गरम कर अच्छी तरह मिला लें और लगातार हिलाते हुए, धीमी आंच पर 1 मिनट के लिए पका लें।
- गुड़ के मिश्रण को हाल ही मेंनिकाल कर हल्का ठंडा कर ले।
- भुने हुए ओट्स, भुना हुआ तेल, अखरोट, बादाम और इलायची पाउडर डालकर अच्छी तरह मिला ले।
- दूध डालकर अच्छी तरह मिला लें
- इस मिश्रण को आठ भागों में बात कर, प्रतिभा को रोल कर गोल बना ले ।
- तुरंत परोसें।

ओट्स और मिक्स नट्स लड्डू के फायदे

- ओट्स और मिक्स्ड नट्स लड्डू एक प्रोटीन से भरपूर पौष्टिक तत्व है।
- और फाइबर से संबंध है और यह कोलेस्ट्रोल के स्तर को कम करने में मदद करते हैं।
- अखरोट और बादाम ओमेगा 3 को उधार देते हैं जो शरीर में सूजन को कम करने में मदद करता है
- लड़कों का आनंद बच्चे, वयस्क, वरिष्ठ नागरिक, हृदय रोगी और यहां तक की गर्भवती महिलाएं भी ले सकती हैं।

(पृष्ठ 20 का शेष)

में मुख्य फसलो के साथ सहयोगी फसले लगाने से मुख्य फसल पर कीट नियंत्रण भी साथ–साथ होता हैं।

फसल सुरक्षा

फफूंदी नाशक– 100 ली. पानी में 3 ली खट्टी लस्सी या छाछ मिलाकर फसल पर छिडकाव करे। यह कवक नाशक है, सजीवक है और विषाणुरोधक है, बहुत ही बढ़िया कार्य करता हैं।

रोगनाशी– सभी तरह की बीमारियों में 200 ली. पानी + 15 ली.जीवामृत + 5 ली.खट्टी छाछ मिलाकर लकड़ी से घोलकर 2 घंटे रखे दो घंटे बाद छिड़काव करे।

कीट रोधक– नीमास्त्र, ब्रह्मनास्त्र, अग्नेयास्त्र व दशपरणी अर्क का प्रयोग करे।

निष्कर्ष–गौ आधारित प्राकृतिक खेती के माडलों को अपनाकर किसान भाई अपनी खेती में जहाँ लागत को न्यूनतम कर सकेंगें वहीं दूसरी तरफ इस पद्धति से उत्पादित होने वाले गुणवत्ता युक्त उत्पाद से मानव स्वास्थ पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा तथा लागत में कमी से किसानों की आमदनी में मुनाफा होगा।

असन्तुलित पोषण से पशुओं में होनें वाले प्रमुख रोग - बचाव एवं उपचार

विद्या सागर* एवं राम जीत**

हमारा देश भारत पिछले काफी वर्षों से दुग्ध उत्पादन के क्षेत्र में प्रथम स्थान पर है लेकिन यदि प्रति पशु दुग्ध उत्पादन देखा जाये तो विदेशों की तुलना में काफी कम है। कृषि के साथ–साथ पशुपालन भी आय की दृष्टि से अच्छा वयवसाय है। वैसे तो पशु संख्या के आधार पर हमारे देश मे सबसे अधिक पशु पाले जाते है। प्रति पशु दुग्ध उत्पादन कम होने के मुख्य कारण ग्रामीण क्षेत्रों में प्रायः पशु पालन का कार्य अनपढ़ या पशु पालन से सबन्धित कम जानकारी रखने वाले कृषकों द्वारा किया जाता है जिससे पशुओं के रख–रखाव में पशुपालकों को अनेंक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अतः पशुपालकों को पशु स्वास्थ्य का प्रारम्भिक ज्ञान होना अति आवश्यक है जिससे उनमें होने वाले साधारण रोगों को समझ सके। पशुओं को होने वाले रोगों में कुपोषण या असन्तुलित पोषण से होने वाले रोग भी बहुत होते है। पशु पालक को यह ज्ञान प्रायः कम ही होता है कि पशुओं को कैसे एवं कितनी मात्रा में चारा–दाना मिलाकर आहार में दिया जाये जिससे पशु स्वस्थ रहकर अच्छा उत्पादन दे सके। विभिन्न पोषक तत्वों की कमी से होने वाले प्रमुख रोगों के कारण एवं उनसे बचाव तथा उपचार से सम्बन्धित विवरण निम्नवत् है।

1.दुधारू पशुओं में दुग्ध ज्वर–

इसे प्रसूत ज्वर नाम से भी जाना जाता है। यह बीमारी 5–10 वर्ष की मादा पशु को ब्यानें के 1–3 दिन के अन्दर (48 घंटे) होता है। इसका प्रमुख कारण खून में कैल्शियम की कमी तथा पैराथायराइड ग्रंथि की दुष्क्रिया से होता है। गाय आदि पशुओं के खून में 10 मिग्रा प्रति 100 घन सेमी के हिसाब से कैल्शियम की उपस्थिति अनिवार्य होती है। कैल्शियम ब्याने के बाद खून से निकल जाता है साथ ही खीस में प्रचुर मात्रा में कैल्शियम होता है जो कि दूध दोहने से पशु शरीर से बाहर आ जाता है जिससे शरीर के खून में कैल्शियम की कमी हो जाती है।

लक्षण–पशु की भूख मारी जाती है। वह बेचैन रहता है। शरीर का तापमान नहीं बढ़ता है। पैरों के सिरे सिर को पकड़कर सीधा कर दिया जाये तो सिर व गर्दन हाथ से छोड़ते ही वह फिर से पूर्ववत् स्थिति में मोड़ लेता है। शरीर ठंडा रहता हैं। दूध उत्पादन एकदम घट जाता है। शरीर में कपकपी आती है एवं माँसपेशियां कमजोर हो जाती है। सॉस धीरे–धीरे गहरी होने लगती है एवं ऑखो की पुतलियॉ फैल जाती है। पशु लड़खड़ानें लगता है जिसके कारण चलनें फिरनें में उसे कष्ट होता है। इस रोग की एक विशेष पहचान यह है कि पशु सिर को पेट के पास मोड़कर बैठ जाता है।

उपचार–मादा पशु से ब्याने के बाद 2–3 दिन तक दूध पूरा ना निकाला जाये तो रोग का भय कम हो जाता है और यदि रोग होता भी है तो पशु को कैल्शियम बोरोग्लेकोनेट का पशु चिकित्सक के सलाह से अन्तः शिरा इन्जेक्शन लगवाने सेशीघ्र लाभ होता है। गर्भावधि के अन्तिम समय में पशुओं को दाना, चारा के साथ कैल्शियम पूरक आहार अवयव खिलाना चाहिए।

2.मैग्नीशियम की न्यूनता–

इसे हाइपोमैगनेशिया टिटेनी, ग्रास स्ट्रंगर आदि नामों से जाना जाता है। श्शरीर में यद्यपि मैगनीशियम खनिज तत्व की अत्यल्प मात्रा ही अपेक्षित होती है, किन्तु यह अधिक महत्वपूर्ण है, इसकी न्यूनता पशु के अकाल मृत्यु का कारण बन सकती है। इस खनिज तत्व के कमी से टिटनेस जैसा प्राणघातक रोग हो सकता है। इसलिए इसे ग्रास टिटेनी या लैक्टेशन टिटैनी भी कहा जाता है। गाय के प्रति 100 मिली खून में 1.7 से 4.0 मिग्रा मैगनीशियम रहता है। 1.7 मिग्रा से थोड़ा कम होने पर कोई लक्षण नहीं दिखते हैं किन्तु यदि इसकी मात्रा खून में 0.5 मिग्रा प्रति 100 मिली से कम होती है तो इसकी न्यूनता के लक्षण दिखाई देते है।

लक्षण–पशु को मिर्गी के दौरे पड़ते है, वह अति उत्तेजित होता है साथ ही चिड़चिड़ा स्वभाव होता है। चेहरे की मॉशपेशियों में ऐंठन आती है, पशु लड़खड़ाने लगता है और अन्त में शरीर में जकड़न आती है। पशु सुस्त दिखायी देता है, भूख कम लगती है और बार–बार मूत्र त्याग करता है। शरीर में ज्यादा समय

*एस.एम.एस (पशु विज्ञान), **वरिष्ठ वज्ञानिक कम अधयक्ष, के.वी.के., अम्बेडकरनगर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

तक ऐठन रहने से पशु की अकाल मृत्यु हो जाती है।

उपचार—कैल्शियम बोरोग्लेकोनेट 25 प्रतिशत+मैगनीशियम हाइपोफास्फाइड 5 प्रतिशत घोल 500 मिली शिरा में गाय या भैस में तथा 50 मिली शिरा भेड़/बकरी को देना चाहिए। अति उत्तेजित पशु को एकांत में रखना चाहिए एवं उसे क्लोराल हाइड्रेट पिलाना चाहिए। चारे के खेतों में हर दो सप्ताह बाद 2 प्रतिशत मैगनीशियम सल्फेट का छिड़काव करना चाहिए।

3.कैल्शियम एवं फास्फोरस की न्यूनता—

दोनों ही महत्वपूर्ण खनिज तत्व हैं, किन्तु शरीर में उसके उचित खपत के लिए विटामिन डी का मिलना आवश्यक है जो कि धूप में सुखाये गये चारे अथवा पशु को सीधी धूप में खड़ा रखनें से विटामिन डी शरीर को प्राप्त होता है। यदि विटामिन डी की ज्यादा शरीर में कमी हो तो औषधि रूप में उसकी प्राप्ति की जा सकती है। शरीर में कैल्शियम और फास्फोरस का अनुपात 3:2 के बारबर होना चाहिए। इन दोनों तत्वों के कमी का मुख्य कारण उनका चारा दाना एवं घास है जो ऐसी मिट्टी में उगाया गया हो जहाँ इन तत्वों की कमी रही हो।

लक्षण—इन तत्वों की कमी से भूख कम हो जाती है। धीरे—धीरे हड्डियों के सिरे असामान्य रूप से बढ़कर बाहर निकल आते है। रीढ़ की हड्डी में टेढ़ापन आता है। घुटनें झुककर टेढ़े हो जाते हैं, कूबड़ निकल आता है और पशुओं को दौरे भी पड़ते हैं इन तत्वों की कमी से बच्चों में सूखा रोग होता है, हड्डियां बहुत अधिक कमजोर हो जाती हैं, जिसके कारण वे लड़खड़ाते और गिर पड़ते हैं दूध उत्पादन क्षमता में कमी आती है। इन तत्वों की कमी से पशुप्रजनन क्षमता कम हो जाती है गर्भकाल के अन्तिम दिनों में गर्भाशय बाहर आने की समस्या एवं कमजोर अथवा मृत बच्चे पैदा होते है। पशुओं को मिट्टी, हड्डियां चबाने तथा गंदगी खाने की आदत पड़ती है जिसके कारण बोटोलिज्म नामक भयंकर बीमारी पशुओं को हो सकती है।

उपचार—पशुओं को कैल्शियम और फास्फोरस युक्त तत्वों को चारा दाना के साथ खिलाना चाहिए। अनाज एवं दलहनी चारा, उचित मात्रा में खिलाने से कैल्शियम की कमी को दूर किया जा सकता है। सूखा चारा, सूखी घास, पुआल, गेहूँ चोकर एवं कैल्शियम और फास्फोरस युक्त खनिज मिश्रण खिलाने से कैल्शियम एवं फास्फोरस की कमी को दूर किया जा सकता है।

4.आयोडीन की न्यूनता—

आयोडीन तत्व की शरीर में अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा में ही आवश्यक है जो कि गलग्रन्थी सुचारू रूप से क्रियाशील रखनें के लिए आवश्यक है तथा बालों को पुष्ठ करनें एवं नाइट्रोजन को शरीर में खपाने में सहायक होता है।

लक्षण—शरीर में आयोडीन तत्व की कमी से गलग्रन्थी बढ़ जाती है जो बाद में गलग्रंथ रोग बन जाता है। प्रायः नवजात बच्चों में आयोडीन की कमी से उनका गला बढ जाता है। गर्दन लम्बी शरीर पर बाल न उगना की समस्या और उनकी मृत्यु हो जाती है। प्रौढ़ पशु जल्दी मरते नहीं है किन्तु गलग्रथियां लटक जाती है। यदि गर्भवती गाय में इस तत्व की कमी हो जाय तो गर्भस्थ शिशु में भी इस तत्व की कमी हो जाती है।

उपचार—गर्भवती मादा पशुओं को गर्भकाल के अन्तिम 3—4 महीनों में दानें के साथ 0.007 प्रतिशत आयोडाइज्ड नमक खिलाना चाहिए। बड़े पशु फार्मों में 300 पौण्ड साधारण नमक में आधा औंस पोटेशियम आयोडाइड अच्छी तरह मिलाकर आयोडाइज्ड साल्ट बनाकर प्रयोग में लाया जा सकता है।

5.कोबाल्ट की न्यूनता—

कोबाल्ट तत्व की न्यूनता से पशु की भूख कम होती है। पशु प्रतिदिन कमजोर होता जाता है एवं उसका वजन घटनें लगता है। चमड़ी खुरदरी एवं पपड़ी युक्त होती जाती है। लिंग सम्बन्धी विकास कार्य रूक जातें हैं अथवा मन्द पडते है। गायों की अपेक्षा बछड़ों में कोबाल्ट तत्व की कमी जल्दी हो जाती है जिसके फलस्वरूप वे छोटे आयु में ही मर जाते हैं अथवा बछड़ों में प्रायः पेचिश रोग भी होता है। पशु में रक्त की कमी होने लगती है।

उपचार—कोबाल्ट सल्फेट या कोबाल्ट क्लोराइड 3 ग्राम प्रति टन चारे में अच्छी तरह मिलाना चाहिए ताकि प्रत्येक बड़े जानवरों को 5—15 मिग्रा कोबाल्ट की आपूर्ति प्रतिदिन हो सके। 500 मिली. पानी में 15 ग्राम नमक घोलकर बछड़ों या रोगी पशुओं को पेट भर पानी पिलाना लाभकारी है। दलहनी चारे में कोबाल्ट प्रचुर मात्रा में होता है, जिससे इसकी आपूर्ति की जा सकती है।

6.जिंक की न्यूनता—

जिंक तत्व की कमी से पशुओं की भूख मारी जाती है

तथा उनका ठीक से विकास नहीं हो पाता। हड्डी तथा बालों में व्याधियां उत्पन्न होती है। सुअर एवं गौवंशीय पशुओं में पैराकिटोसिस नामक चमड़ी का रोग होता है जिसमें पशुओं को खुजली होती है। इस तत्व की कमी से मुर्गी के पैरों में व्याधियां उत्पन्न होती है, पैरों की हड्डियां छोटी तथा मोटी हो जाती हैं और वे ठीक से खड़ी नहीं रह पाती हैं।

उपचार–सूरजमुखी के बीज का तेल, मछली का चूरा से इस तत्व की आपूर्ति की जा सकती है।

7.कार्बोहाइड्रेट्स की न्यूनता–

कार्बोहाइड्रेट्स की न्यूनता के कारण अम्ल रक्तताः (एसिटोनीमियाँ) नामक रोग होता है। मुख्य रूप से यह गायों का रोग है।

कारण

- गर्भकाल में गाय की खुराक में कार्बोहाइड्रेटस की कमी।
- गाय के दूध में शर्करा निर्माण और दुहे गये दूध में कार्बोहाइड्रेटस का अधिक मात्रा में निकल जाने से।
- गायों को दाना खिलाना बन्द करने से, कार्बोहाइड्रेटस की उपापचय में गड़बड़ी होने से।
- गायों को कार्बोहाइड्रेटस वाली चीजें देना बन्द करनें और उसकी जगह दाल एवं प्रोटीन वाली चीजों खिलाने से।
- शरीर में शर्करा का निर्माण कम हो जाता है और उसकी आपूर्ति के लिए प्रोटीन जिगर की और आते हैं जहाँ कार्बोआइड्रेट्स बनते हैं, परिणाम स्वरूप एसिटोन अधिक मात्रा में निर्माण होकर रक्त तथा मूत्र में मिल जाते है।

लक्षण–प्रारम्भ में पशुओं में उदासीनता होती है। कभी–कभी उत्तेजना भी दिखाई देती है। पशुओं में कमजोरी एवं लड़खड़ाहट आनें लगती है। पशु के सॉस, दूध और पेशाब में एसिटोन की मीठी गंध आती है। मन्द रोग में इस रोग की अवधि एक सप्ताह और उग्र रोग में 3–4 सप्ताह होती है।

उपचार–मन्द रोग में पशु को खेत अथवा चारागाह में छोड़ देना चाहिए। उग्र रोग में 40 प्रतिशत डेक्सट्रोज का घोल 500–1000 घन सेमी 4–5 दिन तक शिरा में देना चाहिए।

8.विटामि ए की न्यूनता–

विटामिन ए की कमी से भोजन, शवास नलिकाएं, लार ग्रंथियां, ऑखों की ग्रंथियां, योनि तथा मूत्र मार्ग की शलैष्मिक झिल्लियां कमजोर पड़ जाती है। पशुओं में रतौंधी नामक रोग हो जाता है जिसके कारण सूर्यास्त के बाद पशु को दिखाई नहीं देता और बाद में पशु अंधत्व का शिकार हो जाता है। स्नायु दुर्बल हो जाते है, पशुओं का लड़खड़ाना, शरीर में जकड़न तथा खिचाव आता है। मादा पशु गर्भधारण के योग्य नहीं रहती है। सांड़ो के पुंसत्व में कमी आती है और वे बच्चा पैदा करने में आशक्त हो जाते है कभी कभी मूत्र मार्ग में पथरी उत्पन्न होती है।

उपचार–बछड़ों को माता की खींस तीन दिन तक अवश्य देना चाहिए। हरा चारा पर्याप्त मात्रा में आहार में देना चाहिए। दुधारू अथवा गर्भवती गायों को गर्भकाल की अंतिम अवधि में 20 पौंड हरा चारा प्रतिदिन देना चाहिए। अगर हरा चारा ना हो तो 2–5 औंस काड लिवर आयल प्रतिदिन देना चाहिए जिससे प्रजनन सम्बन्धी व्याधियां या अनियमितता दूर हो सके।

9.विटामिन डी की न्यूनता–

विटामिन डी की शरीर में कैल्शियम और फास्फोरस को ठीक से पचाकर हड्डियां, दांतो का निर्माण, विकास एवं दृढता उत्पन्न करनें के लिए आवश्यक है। गाभिन मादाओं में गर्भकाल के अन्तिम समय में विटामिन डी की बहुत आवश्यकता होती है साथ ही दुग्ध उत्पादन एवं बच्चों के विकास के लिए भी अति आवश्यक है।

लक्षण–विटामिन डी न्यूनता से पशुओं का विकास रूक जाता है और स्वभाव चिड़चिडा हो जाता है। हड्डियॉ तथा दॉत कमजोर पड़ जाते हैं। बछड़ों में सूखा रोग हो जाता है, अगली टाँगों के जोड़ों तथा घुटनों पर सूजन हो जाता है और वे मोटे हो जाते हैं।

उपचार–पशु को धूप में सुखाया गया चारा खिलाना चाहिए। पशु को प्रतिदिन सीधी पड़ने वाली धूप में रखना चाहिए। पशु को चूनें का पानी या कॉड लिवर आयल दे कर विटामिन डी की प्राप्ति की जा सकती है।

पशु पालक भाई उक्त विभिन्न पोषक तत्वों की कमी सें पशुओं में होने वाले प्रमुख रोगों के कारण एवं उनसे बचाव तथा उपचार से सम्बन्धित जानकारी रखकर सन्तुलित पोषण एवं प्रबंन्धन कर अपनें पशुओं से अच्छा लाभकारी उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।

सुपर सीडर द्वारा गेहूं की बुवाई से लागत में बचत एवं फसल अवशेषो का उचित प्रबंधन

एस .के. तोमर एवं मनोज कुमार

धान व गेहूं की कटाई कंबाइन हार्वेस्टर से करना आज की आवश्यकता हो गई है। धान कठाई के बाद किसान को गेहूं बुवाई की जल्दी रहती है क्योंकि विलंब से गेहूं बुवाई करने पर उत्पादन में गिरावट आती है। इसका कारण पूर्वी उत्तर प्रदेश में मार्च माह के समय तापमान में अचानक वृद्धि गेहूं के उत्पादन को प्रभावित करता है।

किसान की धान के बाद गेहूं बुवाई में समस्या

गेहूं की बुवाई मे किसानो को निम्न समस्याओं का सामना करना पड़ता है –

1– धान फसल अवशेष का उचित प्रबंधन कैसे करे ?

2– समय से गेहूं की बुवाई कैसे हो ?

3 गेहूं की अधिक पैदावार हेतु उन्नत तकनीकी का चुनाव एवंगेहूं की फसल से अधिक से अधिक शुद्ध लाभ कैसे प्राप्त करे ?

वर्तमान में उपरोक्त समस्याओं का एक हल है सुपर सीडर से गेहूं की बुवाई व उसके उचित प्रबंधन द्वारा कम लागत में अधिक से अधिक उपज प्राप्त करना वर्ष 2024–22 में पूर्वी उत्तर प्रदेश के लगभग 25लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में सुपर सीडर हैप्पीसीडर व जीरो टिल मशीन से गेहूं की बुवाई हुई थी जिसमें एक बड़ा हिस्सा सुपर सीडर से बुवाई का था। सुपर सीडर से अधिक उत्पादन हेतु प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना होगा।

सुपर सीडर–– सुपर सीडर एक ऐसी मशीन है जो धान गेहूं फसल अवशेषों को खेत से बिना निकाले धान गेहूं की बुवाई करती है सुपर सीडर रोटरी व जीरो कम फर्टी सीडड्रिल का मिश्रण है। यह मशीन एक बार में खेत की जुताई बुवाई व पाटा लगाने का कार्य करती है। जिससे किसानों को लागत में काफी बचत होती है। साथ ही लाइन से लाइन की दूरी व पौधे से पौधे की दूरी भी समान होने के कारण तथा फास्फेटिक उर्वरकों का उचित प्लेसमेंट होने से पौधों का विकास अच्छा होता है। यह मशीन बीज के नीचे उर्वरक गिराने का कार्य बुवाई के साथ करती है। जिससे जमाव के तुरंत बाद पौधों को जड़ के विकास हेतु आवश्यक पोषक तत्व फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ जाती है यह मशीन 60 हॉर्स पावर या इससे ज्यादा शक्ति के ट्रैक्टर के साथ चलाई जा सकती है। यह मशीन एक दिन में 6–8 एकड़ बुवाई कर सकती है इस मशीन में हल्के स्टील से बने हुए उर्वरक व बीज के बक्से समांतर में

साारिणी–1उन्नत प्रजातियां

समय	प्रजाति	उत्पादन क्षमता (कु / एकड़)
समय से बुवाई	डी बी डब्लू 87, डी बी डब्लू 252	60–65
	डी बी डब्लू 303, डी बी 82.4 डब्लू 222	82.1
	एच डी 3226, एच डी 60–65 2967	60–60
	एच डी 3059,	55–60
	डब्लू बी 2	50–55
विलंब से बुवाई हेतु	एच डी 3271, एच डी 3086	45–50
	डी बी डब्लू 173	57
	डी बी डब्लू 107	45–50
	नरेंद्र गेहूँ 1014	45–50
अतिविलम्ब से बुवाई	उन्नत हलना	30–35
असिंचित क्षेत्र	के 37	40–45

कृषि विज्ञान केंद्र बेलीपार गोरखपुर उत्तर प्रदेश

लगे होते हैं। खाद का बॉक्स मशीन के आगे व बीज का बॉक्स पीछे लगा होता है।

बीज व खाद की मात्रा को निर्धारित करने हेतु अलग–अलग मैन्युफैक्चर ने अपना सिस्टम लगाया है। बीज गिरने की गहराई को नियंत्रण करने के लिए गहराई नियंत्रक पहिए का इस्तेमाल किया जाता है।

बुवाई का समय

गेहूं की बुवाई नवंबर माह में जल्द से जल्द करना चाहिए। विभिन्न परीक्षणों व सर्वे मे यह पाया गया कि नवंबर के प्रथम सप्ताह में बुवाई करने पर उपज अधिक प्राप्त होती है।

बुवाई की विधि

गेहूं की बुवाई बिना जुताई हुये खेत मे सुपर सीडर से उपयुक्त नमी पर करनी चाहिए।

बीज दर

समय से बुवाई हेतु 40 किग्रा एवं विलंब से बुवाई पर 50 किग्रा बीज का प्रयोग प्रति एकड़ करना चाहिए।

बीज उपचार

बीज को भूमि व बीज जनित रोगों से बचाव हेतु टेबुकोनाजोल 4 ग्राम या कार्बेडाजिम 2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

बीज की गहराई

गेहूं की बुवाईसुपर सीडर से 5 सेंटीमीटरकी गहराई पर करना चाहिए।

डी.बी.डब्लू.–303 एवं 222 के लिए नत्रजन डेढ़ गुना ज्यादा प्रयोग करना चाहिए तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश में

उर्वरक तत्वों का प्रबंधन

अधिक उपज देने वाली प्रजातियों के लिए संस्तुत उर्वरकों की प्रति एकड़ मात्रा निम्न है

तत्व	तत्व रूप मे मात्रा / एकड़	उर्वरक	प्रति एकड़
नत्रजन	60	यूरिया	110
फास्फोरस	24	डी ए पी	52
पोटास	24	म्यूरेट आफ पोटाश	40
जिंक	2	जिंक सल्फेट	10

'सुपर सीडर से बुवाई करने से पहले 45 किग्रा यूरिया खेत में बुरकावकरना चाहिए। यह ऊपर दिए गए संस्तुत मात्रा के अतिरिक्त होगा।

इनकी बुवाई नवंबर के पहले सप्ताह में अवश्य कर देना चाहिए। इन प्रजातियों मे वृद्धि नियामक के 2 छिड़काव भी करना उपुक्त होता है।

उपरोक्त के अनुसार धान के बाद गेहूं की बुवाई करते समय प्रति एकड़ 45 किग्रा यूरिया प्रति एकड़ क्षेत्र में बुवाई से पहले बिखेर दे उसके बाद 52 किग्रा डीएपी सुपर सीडर में डालकर बुवाई करें। 40 किग्रा जिंक सल्फेट व 40 किग्रा म्यूरेट आफ पोटठाश बुवाई पूर्व खेत में प्रयोग करें। यूरिया की 440 किग्रा को मात्रा तीन बार में पहली बार पहली सिंचाई (2। से 25) दिन के बाद 50 किग्रा दूसरी बार दूसरी सिंचाई के बाद (45 दिन पर) 40 किग्रा तथा तीसरी दूसरी बार बाली निकलने समय पर प्रयोग करना चाहिए।

लीफ कलर चार्ट : किसान भाई गेहूं में यूरिया के प्रयोग को पौधों की आवश्यकता के अनुसार प्रयोग करने के लिए लीफ कलर चार्ट का प्रयोग कर सकते हैं । गेहूं की पत्ती का रंग लीफ कलर चार्ट के चौथे खाने में मिलता है तो प्रति एकड़ 20 किग्रा यूरिया का खेत में बुरकाव करना चाहिए। प्रत्येक 7–70 दिन के अंतराल पर प्रक्रिया को अपनाना चाहिए । लीफ कलर चार्ट प्रयोग करने से 5 से 208 नत्रजन की बचत होती है।

खरपतवार प्रबंधन

सुपर सीडर से गेहूं की बुवाई में खरपतवार प्रबंधन निम्न प्रकारसे करना चाहिए।

सकरी पत्तीः गेहूँ का मामा जंगली जई	सल्फो सल्फपुरान 75WG 13.5 ग्राम या क्लोडिनो फाफ 15WP 160 ग्राम
चौड़ी पत्ती बथुआ कृष्ण नील जंगली मटर सफेद बैजी आदि	मेटसल्फ्यूरोन 90WP 8ग्राम करफेंट्राजोने इधाइल 40 df 20 ग्राम

जिन खेतों में गेहूं का मामा जंगली जई के साथ में चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार ओ में प्रमुख रूप से जंगली पालक भांग व मकोय का जमाव ज्यादा हो वहां पर कारफेन्टाजोन इथाइल (एफिनिटी) के साथ कलोडिनोफाफ मिलाकर डेढ़ सौ लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ पहली सिंचाई के बाद जब खरपतवार दो से चार पत्ती के हो गए हो तो छिड़काव करना चाहिए । छिड़काव करते समय फ्लैठ फैन नोजल का प्रयोग करें तथा नोजल की जमीन से

बुवाई का समय	सिंचाई की संख्या	2020 – 2021	उत्पादन 2024 – 2022 (कुंतल / एकड़)
नवम्बर का प्रथम सप्ताह	2	48.6	44.3
नवम्बर का तीसरा सप्ताह	2	44.3	42.1
नवम्बर का प्रथम सप्ताह	3	54.2	48.9
नवम्बर का तीसरा सप्ताह	3	49.7	45.6

ऊंचाई 45 सेमी रखें यदि संभव हो तो बुम का नोजल प्रयोग करना चाहिए ।

गेहूं की फसल में यदि संकरी पत्ती के खरपतवारों के साथ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार जैसे, बथुआ, कृष्णनील, जंगली पालक, दूदधी, आदि हो तो सल्फोसल्फ्यूरॉन के साथ मेटसल्फ्यूरोन की दी गई मात्रा को मिलाकर सिंचाई के बाद बुवाई के 30–35 दिन पर छिड़काव करें।

सिंचाईः पूर्वी उत्तर प्रदेश में अधिकतर किसान दो सिंचाई करते है जबकि संस्तुती 5 सिंचाई की है। किसान की धारणा है कि दो से ज्यादा बार सिंचाई करने पर उपज में गिरावट का प्रमुख कारण दाने का पतला होना है। मगर विभिन्न परिक्षणों व सर्वे के आधार पर पाया गया कि 3 सिंचाई करने पर दो सिंचाई के सापेक्ष 4–5 कुन्तल उत्पादन में वृद्धि दर्ज की गयी। 2020–21 व 2021–22 के वी के– सीसा नेटवर्क परियोजना के अन्तर्गत किए गए परीक्षणों के परिणाम है।

यहां पहले ध्यान रखना होगा कि 202–2022 के मार्च माह के तापमान की वृद्धि से गेहूं के उत्पादन पर बुरा असर पड़ा। मगर जहां पर 3 सिंचाई दी गयी वहां उत्पादन में वृद्धि हुई। यदि किसान के पास 3 सिंचाई की सुविधा है तो गेंहू में प्रथम सिंचाई ताजमूल निकलते समय, दूसरी सिंचाई बाली निकलते समय तथा तीसरी सिंचाई दुग्धावस्था में करनी चाहिए।

रोग प्रबन्धन

विगत 3–4 वर्षों में गेहूं की फसल में कंडवा रोग सभी प्रजातियों में देखने को मिला। इनकी रोकथाम के लिए बीज कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम या टेबुकोनाजोल ०6075 की एक ग्राम मात्रा प्रति 2 किग्रा बीज की दर से उपचारित करें। खड़ी फसल में बाली निकलने के पहले टोजो (एज़ोक्सिस्ट्रोबिन 41 प्रतिशत+ टेबुकोनाजोल 8.3 प्रतिशत एस सी की 250 मिली. मात्रा में 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

उपज

अधिक उपज देने वाली प्रजातियों (DBW 187, DBW 252 HD 3226) की सुपर सीडर से बुवाई नवम्बर के प्रथम सप्ताह में करने, तीन सिंचाई तथा प्रति एकड़ 55 किग्रा यूरिया के संस्तुत डी.ए.पी व पोटाश के साथ करने पर प्रति एकड़ 25 कुन्तल गेहूं की पैदावार वर्ष 2020–2027 में किसान भाईयों द्वारा प्राप्त की गयी।

सुपर सीडर से बुवाई के लाभः–

(1) लागत में कमी

(2) कम समय में अधिक क्षेत्रफल की बुवाई

(3) बहुत अच्छा जमाव

(4) फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से मृदा में जीवांश कार्बन की मात्रा बढ़ने से मृदा जल धारण क्षमता में वृद्धि होती हैं। मृदा में नली लंबे समय तक बनी रहती है और फसल अंतस्थ ताप के प्रभाव से बचने में सफल रहती है।

सुपर सीडर से गेहूं के बुवाई में सावधानी

(1) बुवाई से पहले मशीन को अच्छी तरह साफ कर बीज गिरने की गहराई तथा मात्रा को जांच लें।

(2) समान्य सस्तुत यूरिया की मात्रा से 45 किग्रा यूरिया अधिक प्रयोग करें, या डी कम्पोजर का प्रयोग करें।

(3) पहली सिंचाई हल्की करें।

(4) मार्च में तापमान में वृद्धि होने की संभावना की दशा में 0.2 प्रतिशत पोटेशियम क्लोराइड का छिड़काव करें। इसके लिए 200 ग्राम पोटेशियम क्लोराइड को 700 लीटर पानी में डालकर घोल बनाएं तथा प्रति एकड़ 200 लीटर घोल का छिड़काव करें। पुनः5 दिन पश्चात फिर छिड़काव करें।

अक्टूबर माह में किसान भाई क्या करें

फसलो में
डॉ. आर.आर. सिंह
प्राध्यापक (मृदा विज्ञान)

1. दांतेदार नरेन्द्र हंसिया से अगेती धान की कटाई वैहिक परिपक्वता पर करें।
2. रोग ग्रसित धान की बाली को निकाल कर झूठा कड़वा रोग का नियन्त्रण करें।
3. उपयुक्त नमी पर 20 अक्टूबर से सिंचित दशा में जौ की आजाद, के 141 लक्षण प्रजातियों की बोआई प्रारम्भ करें।
4. चने की टाइप–3, राधे के 850, काबुली, पन्त जी 144 एवं उकठा अवरोधी, मटर की टा 163, रचना मालवीय मटर 2, पन्तनगर 5, पाउडरी मिल्डूय अवरोधी एवं मसूर की टा 8, पन्त एल 406 व 234 प्रजातियों की बोआई राइजोबियम कल्चर से उपचारित करने के बाद ही करें।
5. चना और मटर का 75–100 किग्रा तथा मसूर का 30–40 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर बोयें। कतार से कतार की दूरी चना में 30–35 सेमी, मटर में 30 सेमी तथा मसूर 20–25 सेमी रखें।
6. तोरिया की बोआई के 25 दिन बाद पहली सिंचाई करें तथा नत्रजन 30 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से टापड्रेसिंग करें।
7. सरसों एवं लाही में बोआई के 15–20 दिन के अन्दर विरलीकरण से आपसी दूरी 15 सेमी कर दें।

सब्जी एवं उद्यान में
डॉ. शशांक शेखर सिंह
विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान)

1. बसन्तकालीन टमाटर, मिर्च, बैंगन तथा मध्यम पिछेती फूलगोभी, पातगोभी, गांठगोभी जिसकी पौध सितम्बर के प्रथम पखवारे में डाले हों उसकी रोपाई कर दें।
2. सितम्बर के दूसरे पखवारे में डाली गयी पिछेती पातगोभी की पौध की रोपाई द्वितीय पखवारे में अवश्य कर दें।
3. अगेती आलू को 10 अक्टूबर तक तथा मुख्य फसल को अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह तक बो दें।
4. आम, अमरूद, नींबू, कटहल आदि में संस्तुत उर्वरक तथा खाद का प्रयोग करें।
5. पपीता लगाने का कार्य 15 अक्टूबर तक कर दें।
6. नये बागों में निकाई–गुड़ाई सम्पन्न करें।
7. नये बागों के बीच में सहफसली खेती के लिये रबी की उपयुक्त फसलों की बोआई करें।
8. परवल से अधिक उपज प्राप्त करने के लिये उन्नतशील प्रजातियां जैसे एफपी 3, एफपी 4, स्वर्णरेखा, बीबीआरपीजी 1, आईआईवी आरपीवी 105 की प्रवर्धन का उचित समय सितम्बर होता है परन्तु नदियों के किनारे दियरा भूमि पर परवल की रोपाई अक्टूबर, नवम्बर में की जाती है। परवल का प्रवर्धन मुख्य रूप से बेलों के द्वारा होता है इसको लगाते समय प्रत्येक दस मादा पौधोंके बाद एक नर पौधे की बेल लगाना आवश्यक होता है।

फसल सुरक्षा
डॉ. वी. पी. चौधरी एवं डॉ. पंकज कुमार
सहायक प्राध्यापक (पादप रोग)

1. सैनिक कीट का नियन्त्रण मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत धूल 25 किग्रा प्रति हेक्टेयर से करें।
2. बीज शोधन 2 ग्राम थीरम+1 ग्राम कार्बेन्डाजीम प्रति किग्रा बीज की दर से करें।
3. खरपतवार नियन्त्रण के लिये एक किग्रा वासालीन 1000 लीटर पानी में घोल कर प्रति हेक्टेयर जमाव के पूर्व छिड़काव करें।
4. सब्जी बीज को 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम दवा को प्रति किग्रा बीज को शोधित कर बुवाई करें।
5. आम के गुच्छा रोग की रोकथाम हेतु एन ए 200 पी पी एम अर्थात 200 मिग्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : ऊसर में कौन–कौन सी फसल ली जा सकती है और कब–कब किन–किन समयों में?
(श्री कप्तान सिंह, ग्राम हलियापुर, जनपद सुल्तानपुर)

उत्तर : ऊसर भूमि में उपयुक्त सुधारकों जैसे जिप्सम अथवा पाइराइट मई–जून में प्रयुक्त करने के उपरान्त जुलाई में धान की रोपाई करनी चाहिए। धान कटने के बाद रबी में जौ अथवा गेहूं की फसल उगानी चाहिए। ऐसे में खेतों को प्रायः किसान भाई गर्मी में खाली छोड़ देते हैं जिनसे हानिकारक लवण पुनः जमीन के सतह पर जमा हो जाते हैं। अतः यह आवश्यक है कि गर्मी में भी कोई न कोई फसल ली जाये। इस प्रकार तीन वर्ष लगातार धान जौ/गेहूं ढैंचा क्रम अपनाना चाहिए।

प्रश्न : अच्छे किस्म का रबी से सम्बन्धित फसलों के बीज कहां प्राप्त करें?

संकलनकर्ता : डॉ. आर.आर. सिंह, प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

(श्री वीरेन्द्र कुमार, ग्राम इसौली भारी, जनपद अयोध्या)

उत्तर : चना, मटर, तोरिया, सरसों तथा गेहूं का बीज आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या के बीज तकनीकी विभाग तथा चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर से प्राप्त कर सकते हैं, वैसे प्रत्येक जनपद के कृषि विभाग द्वारा भी उन्नत किस्म का बीज उपलब्ध कराया जाता है

प्रश्न : बरानी दशा में गेहूं की खेती में उर्वरक की कितनी मात्रा डालें?

(श्री अशोक पाण्डेय, ग्राम सरूरपुर, जनपद अयोध्या)

उत्तर : बरानी दशा में गेहूं की खेती के लिये 40:30:30 किग्रा के अनुपात में क्रमशः नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। उर्वरक की यह सम्पूर्ण मात्र बुवाई के समय कूंड़ों में बीज के दो–तीन सेमी नीचे नाई/चोंगा द्वारा बेसल ड्रेसिंग के रूप में देना चाहिए। बाली निकलने से पूर्व वर्षा हो जाने पर 15 से 20 किग्रा प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन की टापड्रेसिंग लाभजनक होती है। यदि वर्षा न हो तो 2 प्रतिशत यूरिया का पर्णीय छिड़काव किया जाना फायदेमंद होगा

प्रश्न : राई सरसों के प्रमुख रोग कौन–कौन से हैं तथा उनका नियंत्रण कैसे करें?

(श्री सौरभ सिंह, ग्राम–हलियापुर, जनपद सुल्तानपुर)

उत्तर : राई सरसों में लगने वाले रोगों में झुलसा, सफेद गेरूई एवं तुलासिता रोग प्रमुख है। झुलसा रोग होने पर मैंकोजेब 2 किग्रा अथवा कॉपर आक्सीक्लोराइड 3 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। सफेद गेरूई के नियंत्रण हेतु रीडोमिल (एम जेड 78) 2.5 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 800–1000 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। तुलासिता रोग होने पर सफेद गेरूई के नियंत्रण वाले रसायन का प्रयोग करना चाहिए।

प्रश्न : चने में उकठा रोग लग जाता है क्या करें?

(श्री प्रहलाद सिंह, ग्राम–नवाबगंज, जनपद गोण्डा)

उत्तर : चने में उकठा रोग से बचाव हेतु गर्मियों में मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करने पर मृदाजनित रोगों का नियंत्रण करने में सहायता मिलती है। जिन खेत में उकठा रोग अधिक लगता हो उसमें तीन–चार वर्ष तक चना की फसल नहीं लेना चाहिए। बुवाई से पूर्व बीज को 5 ग्राम ट्राइकोडरमा या 4 ग्राम ट्राइकोडरमा+1 ग्राम कार्बेन्डाजिम से शोधित कर बुवाई करना चाहिए।

प्रश्न : अण्डा उत्पादन हेतु मुर्गियों की कौन–सी नस्ल अच्छी पायी जाती है?

(श्री सरफराज, ग्राम–बल्दीराय, जनपद सुल्तानपुर)

उत्तर : अण्डा उत्पादन हेतु व्हाइट लेगहार्न, रोड आइसलैण्ड रेड नस्लें अच्छी पायी गयी हैं परन्तु व्यवसायिक अण्डा उत्पादन हेतु व्हाइट लेगहार्न नस्ल सबसे अच्छी पायी गयी है जो एक वर्ष में लगभग 280 से 320 अण्डे का उत्पादन करता है परन्तु अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिये इसका वैज्ञानिक तरीके से प्रबन्धन करना आवश्यक है। अधिक जानकारी हेतु कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या से सम्पर्क करें।

(पृष्ठ 22 का शेष)

कि प्राकृतिक अथवा प्रबंधन के द्वारा परिस्थिति के सभी पहलुओं को बांधे रखता है। फसल एवं पशु उत्पादन को बरकरार रखता है। जल तथा वायु की गुणवत्ता बढ़ाता है और मानव स्वास्थ तथा अन्य जीवों के जीवन में सहयोग करता है।

भूमि गुणवत्ता के सूचकः

भूमि की गुणवत्ता के निम्न सूचक होते है–

1. भौतिक गुणवत्ता
2. रासायनिक गुणवत्ता
3. जैविक गुणवत्ता
4. कार्बनिक पदार्थ गुणवत्ता

फसल अवशेष का मृदा की भौतिक गुणवत्ता पर प्रभाव

- फसल अवशेष के मिलाने सेमृदा की संघट्य, मृदा रंध्राकाश, जलीय चालकता, जल की अवशोषण दर तथा मृदा घनत्व पर प्रभाव पड़ता है।
- फसल अवशेष के मिलाने से मृदा में संघट्य पर विशेष प्रभाव पड़ता है। फसल अवशेष के मिलाने से सूक्ष्म जीव, जीव भार में वृद्धि, सक्रिय कार्बनिक पदार्थ में वृद्धि होती है तथा कार्बनिक पदार्थ के आयतन/आकार में वृद्धि होती है जिसके कारण मृदा संघटन में सुधार होता है।
- फसल अवशेष के मिलाने से मृदा का घनत्व कम होता है। जलीय चालकता में वृद्धि होती है। साथ ही साथ मृदा में रन्ध्राकार में वृद्धि होती है।

फसल अवशेष का मृदा की रासायनिक संरचना पर प्रभाव :

फसल अवशेष को जमीन में मिलाने से भूमि के (PH) मान कार्बनडाई आक्साइड एवं कार्बनिक एसिड जो फसल अवशेष के सड़ने–गलने के दौरान उत्पन्न होने से प्रभावित होता है जहां पर जल भराव वाली जमीनों में यदि धान का पुआल मिलाया जाय तो पी.एच. मान शीघ्र ही कम हो जाता है। फसल अवशेष को जमीन में मिलाने से गुणवत्ता को गिरने से रोकता है साथ ही साथ पी.एच. मान तथा एसिड भूमि के ई.सी. मान को बढ़ा देता है। फसल अवशेष को क्षारीय भूमि में मिलाने से पी.एच. मान एवं ई.सी. मान में कमी आती है।

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्जियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित